आधी दुनिया

वर्ष-31, अंक -1, जनवरी-मार्च 2025

महिला शिक्षण सामग्री

सशक्त महिलाएं : बदलाव की अग्रदूत

कात्यायनी की कविताएं

एक ढलती सदी का सच

क़ानून
साफ़ गले से बोलता है,
संविधान
एक दार्शनिक चुप्पी में डूबा रहता है
और सत्ता
भाषा की शुद्धता का आग्रह करती है
जब लोग
मुँह खोलते हैं
तो गले से खून के थक्के बाहर आते हैं।

धीरे-धीरे वे पिघलते हैं
अनगढ़-से शब्दों में ढलते हुए।

अर्थ
हृदय तक प्रवाहित होते हैं
यूँ एक सदी ढलती है।

क़ैदख़ानों में कारीगर
दिन गिनते हैं
रोशनदान से आती-जाती
रोशनी और अँधेरे की पारियाँ गिनते हुए। ■

इस स्त्री से डरो

यह स्त्री
सब कुछ जानती है
पिंजरे के बारे में
जाल के बारे में
यंत्रणा-गृहों के बारे में
उससे पूछो।

पिंजरे के बारे में पूछो,
वह बताती है
नीले अनंत विस्तार में
उड़ने के
रोमांच के बारे में।

जाल के बारे में पूछने पर
गहरे समुद्र में
खो जाने के
सपने के बारे में
बातें करने लगती है।

यंत्रणा-गृहों की बात छिड़ते ही
गाने लगती है
प्यार के बारे में
एक गीत।

रहस्यमय हैं इस स्त्री की उलटवासियाँ
इन्हें समझो।
इस स्त्री से डरो। ■

वर्ष-31, अंक-1, जनवरी-मार्च 2025

आधी दुनिया

संपादक
रोज केरकेट्टा

संपादक मंडल
साल्गे मार्डी
सुनील मिंज
श्रावणी
शशि बारला

कलापक्ष
इंडिजिनोग्राफिक्स

संपादन कार्यालय
संवाद
301/ए, उर्मिला इन्क्लेव
पीस रोड, लालपुर
रांची - 834001 (झारखंड)
फोन - 0651-2530356
E-mail : **sarjomsamvad@gmail.com**
Website : **www.samvad.net**

पत्रिका में प्रकाशित आलेखों में व्यक्त विचार लेखकों के हैं, उनसे संपादकीय सहमति अनिवार्य नहीं है।

रोज केरकेट्टा द्वारा संपादित एवं प्रकाशित तथा आई.डी.पब्लिशिंग, रांची द्वारा मुद्रित

सीमित प्रसार

अनुक्रम

03	तक़दीर भी बदलेगी और तस्वीर भी	**साल्गे मार्डी**
04	हौसलों की उड़ान	**मुकेश कुमार दां**
06	महुआ क्रांति – जंगल से बाजार तक	**गुलाब चंद्र**
08	बदलाव की ओर बढ़ते कदम	**निरसो हांसदा**
09	कुछ नया करने की तमन्ना	**एनी टुडू**
10	अपना स्वास्थ्य, अपने हाथ	**सीमा**
11	जहां चाह वहां राह	**महजबी परवीन**
12	ग्रामीण मिनी मार्ट : सशक्तिकरण की पहचान	**अमित कुमार**
13	जलवायु संकट समाधान में महिला भागीदारी	**पूजा कुमारी**
14	पे फुडुः सासाड़ (तीन दोना हल्दी)	**डा. कृष्ण चन्द्र टुडू**
16	महिला किसान की जीवन-यात्रा	**सुमित्रा कुजूर**
18	वसंत ऋतु और गर्मी में होने वाली बीमारियां और सावधानी	**आधी दुनिया डेस्क**
20	शहद से शराब तक का सफर	**आधी दुनिया डेस्क**
22	मुक्ताकाश	**वंदना टेटे**
23	स्त्री और उसका बकरा	
24	संघर्ष के लिए बढ़े कदम	**शशि बारला**
27	ताकतवरों ने रूढ़ियां तोड़ी	**आधी दुनिया डेस्क**
29	आत्मनिर्णय के क्षण	**शशि बारला**
30	आत्मनिर्णय के क्षण	**आधी दुनिया डेस्क**
31	हौसले की जीत	**रोज केरकेट्टा**
34	सामूहिक खेती में हर घर से महिला-पुरुष करते हैं योगदान	**सनत कुमार पानी**
34	सूरज, चांद और घड़ा (लघु कथा)	
35	झलकारी बाई	**डॉ. रोज केरकेट्टा**
36	चक्र और चक्कर	
37	संवाद की गतिविधियां	**आधी दुनिया डेस्क**

जहाँ महिलाएं सशक्त होती हैं, वहीं से बदलाव की शुरुआत होती है

'आधी दुनिया' का यह अंक उन आवाज़ों को मंच देता है, जो अक्सर मुख्यधारा की बहसों और नीतियों से गायब रहती हैं – वे आवाज़ें जो मिट्टी, मेहनत और मौन से उपजती हैं। ये वे महिलाएं हैं जो ग्रामीण समाज की रीढ़ हैं, लेकिन जिनका योगदान अक्सर अदृश्य रह जाता है।

आज जब हम लैंगिक समानता और समावेशी विकास की बात करते हैं, तो हमें ज़रूरत होती है उन उदाहरणों की, जो सिर्फ भाषणों में नहीं, ज़मीन पर नज़र आते हैं। इस अंक में हम ऐसी ही महिलाओं की कहानियों को शामिल किया गया है - जो मिनी मार्ट चला रही हैं, जो किसान मित्र बनकर खेतों को बदल रही हैं, या फिर समुदायों में नेतृत्व कर रही हैं। वे केवल अपने घरों के लिए नहीं, पूरे समाज के लिए नए रास्ते बना रही हैं।

इन कहानियों के पीछे वर्षों की अनदेखी, असमानता और जटिल संघर्ष छिपे हैं। लेकिन इन महिलाओं ने हर चुनौती को अवसर में बदला है। जब उन्हें जानकारी, साधन और समर्थन मिला, तो उन्होंने यह साबित कर दिया कि वे सिर्फ 'लाभार्थी' नहीं, बल्कि बदलाव की अग्रदूत हैं।

'आधी दुनिया' का यह अंक केवल आंकड़ों या योजनाओं की चर्चा नहीं करता – यह उन स्त्रियों की बात करता है जो बदलाव को जी रही हैं। जो अपने अनुभव से निर्णय ले रही हैं, सवाल उठा रही हैं और नए सपनों की ज़मीन तैयार कर रही हैं।

हम आशा करते हैं कि यह अंक केवल पढ़ा ही नहीं जाएगा, बल्कि इससे विचार जन्म लेंगे, संवाद होंगे और नीतियों में जगह बनेगी – ताकि 'आधी दुनिया' सच में बराबरी की पूरी दुनिया बन सके।

मेढ़िया गांव में महिला किसानों की आत्मनिर्भरता की कहानी

तक़दीर भी बदलेगी और तस्वीर भी

साल्गे मार्डी

'तक़दीर भी बदलेगी, तस्वीर भी बदलेगी,
हिम्मत ना हार मंजिल के मुसाफिर,
बस मेहनत कर,
एक दिन जिंदगी भी बदलेगी।'

मेढ़िया गांव की चार महिला किसानों ने अपनी तक़दीर और तस्वीर को कुछ इसी तरह बदला है।

कहानी की शुरुआत कुछ इस तरह से हुई। पूर्वी सिंहभूम के मुसाबनी प्रखंड अंतर्गत मेढ़िया गांव में नवम्बर 2023 को स्वयं सेवी संस्था 'संवाद' द्वारा 10 महिला किसानों का एक संगठन बनाया गया था।

शुरुआत में संगठन की सदस्यों ने आत्मनिर्भरता के लिए सरकार द्वारा दिए जाने वाले ऋण प्राप्त करने का प्रयास किया। इसमें उन्हें सफलता मिली। 'संवाद' कार्यकर्त्ता और इन समूह के प्रयास से खेती के लिए सरकार द्वारा प्रति महिला किसान को 3300 रुपए स्वीकृत किए गए। इस राशि को एक निश्चित समय के बाद बिना ब्याज के वापस करना था।

सभी ने अपनी-अपनी राशि को मिलाकर जैविक खेती की, लेकिन लगातार सूखा पड़ने एवं अन्य कारणों से इन तमाम महिला किसानों को खेती कार्य में सफलता नहीं मिली।

इनके लिए निराशाजनक स्थिति तब और पैदा हो गई जब इन 10 महिला किसानों में से 6 ने हताश और निराश होकर खेती कार्य से अपने हाथ पीछे खींच लिए। साथ ही उन्होंने अपने पैसे भी वापस ले लिए।

बच रहीं चार महिला किसान - पार्वती मुर्मू, मालती मार्डी, सीता मुर्मू और मोनीमाला हांसदा - के सामने मायूस और निराश कर देने वाली स्थिति थी। उन्हें अब न केवल ऋण वापसी के बारे में सोचना था बल्कि बहुत

ही छोटे स्तर से खेती करके अपनी आमदनी को बढ़ाने का भी।

पर इन्होंने हिम्मत नहीं हारा। चारों ने मिलकर एक उत्पादक समूह बनाया और निश्चिय किया कि जैविक खेती के माध्यम से वे सब्जी, अनाज व अन्य वस्तुओं का न केवल पैदावार करेंगी बल्कि उन्हें बाजार-हाट में खुद बेचेंगी भी।

इसी बीच इस समूह को पटवन के लिए सरकार की ओर से इन्हें मूल्यरहित एक सोलर पंप मिला जो इनके लिए संजीवनी का काम किया। समूह पटवन के लिए सोलर पंप का इस्तेमाल करता है। पंप मशीन डीजल से संचालित होता है। अपने 4 बीघा की जमीन पर यह समूह भिण्डी, नेनुआ, बरबट्टी, साग इत्यादि की खेती कर रहा है। इनमें से खासकर भिंडी की मांग इतनी है कि वह पूरी नहीं हो पा रही है।

समूह के लिए अभी शुरुआत है। कितनी सफलता मिलती है, यह तो वक्त बलताएगा, पर इनकी हिम्मत, हौसले और प्रयासों को सलाम! ■

हौसलों की उड़ान

मुकेश कुमार दां

सपने हर कोई देखता है, किसी के सपने पूरे होते हैं तो किसी के नहीं। अपने सपने को पूरा करने के लिए हर इंसान बहुत ही यत्न करता है पर यत्न के साथ-साथ यदि किसी का साथ या सहारा मिले तो उसके सपने पूरे होने की संभावना बढ़ जाती है। और सपने जब पूरे होते हैं तब उस इंसान का मनोबल बढ़ता है। जीवन में आगे बढ़ने की उसकी रफ्तार भी गति पकड़ती है। और समाज के लिए वह एक प्रेरणा बनती है ऐसी ही एक कहानी है झारखंड के जामताड़ा जिले के फतेहपुर प्रखंड के छोटे से गांव सुसनीबाद की रहने वाली मालती देवी की। मालती देवी पहले एक गृहिणी थी, उनके पति शिवचरण राम पारंपरिक खेती करते थे लेकिन कम पैदावर और आर्थिक समस्याओं के कारण परिवार को आर्थिक कठिनाईयों का सामना करना पड़ता था। चूंकि हमारा समाज पितृसत्तात्मक समाज है। समाज में महिलाओं का स्थान दोयम दर्जे का है। घरेलू कार्यों के साथ-साथ खेती किसानी का 80 प्रतिशत कार्य करने के बावजूद मालती देवी को कार्यों के योगदान को रेखांकित नहीं किया जाता था। आज भी समाज में महिलाओं की पहचान किसान के रूप में नहीं है वह अपने ही खेत में मजदूर के रूप में कार्य करती रही है। उनके पास आर्थिक रूप से स्वतंत्र बनने के अवसर भी बहुत कम होते हैं।

'संवाद' संस्था और एस.बी.आई. फाउंडेशन के संयुक्त पहल ने न केवल मालती देवी की बल्कि गांव की अन्य महिलाओं की जिन्दगी बदल दी। 'संवाद' हमेशा से ही समुदाय के साथ मिलकर कार्य करते रहा है। समुदाय

को जागरूक करने के साथ-साथ उनकी आजीविका को सुनिश्चित करने का कार्य भी करता है ताकि कोई भी इंसान अपनी बुनियादी जरूरतों को बेहतर तरीके से पूरा कर सकें। क्षेत्र में कार्य के दौरान 'संवाद' ने कृषि जागरूकता और प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करना शुरू किया। इसके साथ ही एस.बी.आई. के सहयोग से जल संचयन सरंचनाओं का निर्माण एवं तालाबों का पुनर्जीवन कार्य किया। जल संचयन के निर्माण एवं तालाबों के जीर्णोद्वार से समुदाय को लाभ मिला। इसके पीछे यह उद्देश्य था कि गांव को खेती की नयी-नयी तकनीक की जानकारी मिले जिससे कि गांव आर्थिक रूप से स्वावलंबी हो। इन प्रशिक्षणों में महिला भागीदारी को भी प्रोत्साहित किया क्योंकि 'संवाद' हमेशा से ही लैंगिक समानता का पक्षधर रहा है। हमारा मानना है कोई भी बदलाव महिलाओं के सहभाग बिना पूरा नहीं हो सकता है। महिलाओं के किसान के रूप में पहचान मिले यह भी 'संवाद' के कार्यक्रम का मुख्य एजेन्डा रहा है। इसी तरह के प्रशिक्षण कार्यक्रमों में मालती देवी ने हिस्सा लिया और खेती करने के नये-नये तरीकों को जाना। जैविक खेती, जल प्रबंधन और फसल विविधता के बारे में सीखा। मालती देवी का भी सपना था कि वह एक सफल किसान बने और समाज में उसकी भी एक पहचान हो।

परंतु पूर्व में परिस्थितियां उसके अनुकूल नहीं थी, चुनौतियां भी बहुत आई। इसके कई कारण हैं। कृषक को नये-नये तरीकों के बारे कम जानकारी थी। उन्नत तरीकों की जानकारी न रहने से कम पैदावार होता था जिससे मुनाफा भी कम होता था। मॉनसून के भरोसे रहने पर केवल धान ही उगा पाते थे। सूखा या ज्यादा बारिश होने पर फसल प्रभावित होती थी। खेती बाजार पर आश्रित था बीज, खाद, सभी के लिए किसान बाजार पर निर्भर होते हैं जिससे खेती करने में लागत ज्यादा हो जाता है। किसानों का बाजार से सीधा संपर्क नहीं होता है। बिचौलियों पर निर्भर रहने के कारण पैदा हुआ उपज का मुनाफा भी उन्हें कम मिलता है।

समाज में व्याप्त परंपरागत सोच कि महिलायें सिर्फ गृहिणी होती हैं किसान नहीं। यह सोच भी कहीं न कहीं मालती देवी के सपने को पीछे धकेलने का कार्य करता रहा।

पर कहते हैं न जब महिलाओं को अवसर दिया जाता है तब वे अपनी क्षमता का प्रदर्शन करने से पीछे नहीं हटती। 'संवाद' एवं एस.बी.आई. फॉउन्डेशन ने जब मालती देवी को अपना सपना पूरा करने का अवसर दिया और उसके सपने पूरे हो उसके लिए सहयोग दिया, तब मालती देवी सभी बाधाओं एवं चुनौतियों को पछाड़ते हुए दुगुने जोश से आगे बढ़ती गई।

जैविक खेती के माध्यम से उन्होंने खेती के लागत को कम किया। साथ ही पारंपरिक बीज के संरक्षण संवर्द्धन की दिशा में आगे बढ़ी है। आज उनकी खेती की उपज 30 प्रतिशत बढ़ी है, आय दुगुनी हुई है और जीवन स्तर में भी बदलाव आयी है। अब वह केवल गृहिणी नहीं बल्कि एक सफल महिला किसान है।

मालती देवी के अनुसार पहले पानी की कमी के कारण खेती करना मुश्किल होता था। खेती मॉनसून पर आधारित थी। मॉनसून समय पर न आने या बारिश कम होने पर फसल प्रभावित होती थी। लेकिन अब बेहतर सिंचाई सुविधायें मिलने से हम धान के अलावा अन्य फसल एवं साग सब्जी भी उगा रहे हैं। घर के उपयोग के साथ-साथ बाजार में भी बेच रहे हैं जिससे मुनाफा भी होता है।

मालती देवी की यह सफलता की कहानी इस बात का प्रमाण है कि यदि महिलाओं को सही अवसर और मार्गदर्शन मिले, तो वे किसी भी क्षेत्र में आगे बढ़ सकती हैं। एसबीआई ग्राम सक्षम और संवाद संगठन की पहल ने उन्हें एक नई दिशा दी, और उन्होंने मेहनत और लगन से अपनी तकदीर बदल दी।

अब मालती देवी केवल अपने परिवार की सहारा नहीं, बल्कि गाँव की महिला किसानों के लिए एक प्रेरणा स्रोत बन गई हैं। ■

महुआ क्रांति – जंगल से बाजार तक

गुलाब चंद्र

झारखंड के गोमिया प्रखंड के सियारी पंचायत का दवार गांव। गांव के चारों ओर घना जंगल है, जहां महुआ, साल, तेंदू और पलाश के पेड़ यहां के जीवन का आधार है। यहां के आदिवासी समुदाय की अर्थव्यवस्था मुख्य रूप से जंगल पर निर्भर है। महुआ इस क्षेत्र के लिए किसी जीवनरेखा से कम नहीं है, लेकिन पहले इसका उपयोग अधिकतर शराब बनाने में होता था।

गांव में पुरुष महुआ के फूल इकट्ठा कर उसे शराब बनाने और बेचने में लगाते थे। इससे गांव में नशाखोरी बढ़ रही थी, पारिवारिक तंगी बनी रहती थी और महिलाएं आर्थिक रूप से कमजोर थीं। ऐसे माहौल में लालदीप सोरेन और उनकी पत्नी पार्वती देवी ने कुछ अलग करने की ठानी। उनके साथ चांद मुनी, मंजु देवी, मीना मूर्मू, फुल कुमारी, बबीता देवी और प्रेमा देवी भी जुड़ गईं। उन्होंने मिलकर 'जून मार्शल महिला समूह' की स्थापना की और पारंपरिक संसाधनों से नई आजीविका खोजने की राह पर निकल पड़ीं। इस बदलाव की प्रेरणा बने गुलाब चंद्र, जो 'संवाद' से जुड़कर ग्रामीण विकास और पर्यावरण संरक्षण से जुड़े कार्यों में सक्रिय हैं। इसके अलावा वे सियारी पंचायत के सात गांवों में ग्राम सभा सशक्तिकरण का कार्य भी करते हैं। उन्होंने महिलाओं को महुआ के नए उपयोग सिखाने और उन्हें आत्मनिर्भर बनाने में अहम भूमिका निभाई।

संघर्ष की शुरुआत

महुआ का सही उपयोग कैसे हो?

एक दिन, गांव के ग्राम सभा पर गुलाब चंद्र गांव की महिलाओं से बात कर रहे थे कि 'महुआ सिर्फ शराब बनाने के लिए नहीं है। यह पोषण से भरपूर है। इससे लड्डू, बिस्किट, चाय और अन्य उत्पाद बनाए जा सकते हैं, जो बाजार में अच्छे दाम पर बिक सकते हैं।'

महिलाएं चौंक गईं। अब तक उन्होंने महुआ को बस एक ही रूप में देखा था – शराब के रूप में।

पार्वती देवी (सोचते हुए) – 'अगर हम महुआ से लड्डू बना सकते हैं, तो यह गांव की तस्वीर बदल सकता है।'

मीना मूर्मू – 'लेकिन हमें इसे बनाना और बेचना कैसे आएगा?'

गुलाब चंद्र – 'हम यह सब सीख सकते हैं। सबसे पहले, हमें महुआ के उपयोग को समझना होगा और एक समूह बनाना होगा। समूह सदस्यों का प्रशिक्षण हमारे संस्था द्वारा दिलाया जायेगा'।

वर्ष 2021 में में साल्गे मार्डी और सुदर्शन सरदार द्वारा महुआ लड्डू बनाने का प्रशिक्षण दिया गया।

महुआ लड्डू बनाने की पहल

महिलाओं ने मिलकर 'जून मार्शल महिला समूह' का गठन किया। वे रोज सुबह महुआ के फूल इकट्ठा करतीं, उन्हें छांटकर सुखातीं और फिर इन्हें पीसकर लड्डू बनाने की प्रक्रिया शुरू हुई। महुआ लड्डू बनाने के लिए

उन्होंन उसमें गुड़, चावल का आटा, तिल और सूखे मेवे मिलाए। जब पहली बार लड्डू तैयार हुए, तो सभी ने इसे चखा। स्वाद शानदार था।

लेकिन अब सबसे बड़ी चुनौती थी इसे बाजार तक कैसे पहुंचाया जाए?

पहला बाजार और शुरुआती संघर्ष

महिलाओं ने गांव के साप्ताहिक हाट में अपने लड्डू के पैकेट रखे। पहले दिन सिर्फ कुछ ही पैकेट बिके।

चांद मुनी – 'लोग इसे लेकर हिचकिचा रहे हैं। उन्हें महुआ से सिर्फ शराब बनाने की आदत है, लड्डू खाने की नहीं।'

पार्वती देवी – 'हमें लोगों को इसके फायदे समझाने होंगे।'

महिलाओं ने ग्राहकों को बताया कि महुआ लड्डू ऊर्जा से भरपूर है, पोषण देता है और सेहत के लिए अच्छा है। धीरे-धीरे, लोग इसे पसंद करने लगे।

कुछ दिनों में, आसपास के गांवों से भी लोग इसे खरीदने आने लगे।

लुगु बुरु घंटाबाड़ी धरोम गढ़ मेले में सफलता

महुआ लड्डू की बढ़ती मांग को देखकर महिलाओं को 'लुगु बुरु घंटाबाड़ी धरोम गढ़ मेला' में स्टॉल लगाने का मौका मिला।

मेले की तैयारी ज़ोर - शोर से चलने लगी।

महिलाओं ने 1000 से अधिक लड्डू पैकेट तैयार किए।

इसके अलावा, महुआ बिस्किट, महुआ चाय, महुआ पाउडर भी बनाए।

लालदीप सोरेन और पार्वती देवी खुद स्टॉल पर खड़े होकर ग्राहकों को इन उत्पादों के फायदे समझाने लगे।

मेले में महुआ लड्डू की शानदार बिक्री हुई।

पहले ही दिन 500 पैकेट बिक गए।

दूसरे दिन महिलाओं को और लड्डू मंगाने पड़े, ग्राहकों की भारी मांग थी।

महुआ सिर्फ जंगल में नहीं, बल्कि बाजार में भी अपनी पहचान बना चुका है।

सामाजिक और आर्थिक बदलाव

महुआ लड्डू और अन्य उत्पादों की सफलता ने गांव की महिलाओं के जीवन में बड़ा बदलाव लाया।

1. आर्थिक सशक्तिकरण – महिलाएं अपनी कमाई करने लगीं, जिससे उनके परिवारों की स्थिति सुधरी।
2. नशाखोरी में कमी – महुआ अब शराब के बजाय पोषणयुक्त उत्पादों में इस्तेमाल होने लगा।
3. शिक्षा में सुधार – महिलाएं अपने बच्चों को स्कूल भेजने में सक्षम हो गईं।
4. गांव की पहचान – दवार गांव अब सिर्फ जंगल से जुड़ा नहीं है, बल्कि उसकी पहचान एक सफल महिला समूह के रूप में होने लगी।

अब गांव के ग्राम सभा पर गुलाब चंद्र, पार्वती देवी, लालदीप सोरेन और महिला समूह बैठते हैं तो चर्चा होती है कि 'महुआ ने हमारे भविष्य को नई दिशा दी है, अब इसे और आगे बढ़ाना हमारी जिम्मेदारी है। पार्वती देवी हमेशा कहती हैं - 'पहले हम इसे जंगल में बर्बाद होते देखते थे, अब यही हमारी सबसे बड़ी ताकत बन गयी है।' लालदीप सोरेन कहते हैं - 'अब हमारा सपना है कि महुआ लड्डू पूरे झारखंड और देशभर में पहुंचे।'

महुआ क्रांति सिर्फ एक व्यापारिक सफलता नहीं है, बल्कि इस गांव के लिए एक सामाजिक आंदोलन है, जिसने गांव की महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाया है। आज, 'जून मार्शल महिला समूह' की महिलाएं महुआ उत्पाद बेच रही हैं, और उनकी सफलता पूरे राज्य के लिए प्रेरणा का स्रोत बन गया है। अब जब भी कोई महुआ लड्डू खाता है, तो वह सिर्फ एक मिठाई नहीं, बल्कि संघर्ष, आत्मनिर्भरता और बदलाव की कहानी चखता है। ■

बदलाव की ओर बढ़ते कदम

निरसो हांसदा

ग्रीन क्लब अपने गांव और उसके आसपास के पर्यावरण के संरक्षण और संवर्द्धन का एक सामूहिक अभिक्रम है जिसमें गांव के किशोर-किशोरी एवं युवक युवतियां शामिल हैं। यह क्लब अपने गांव एवं आस पड़ोस के वातावरण को स्वच्छ रखने, उसे प्रदूषण से मुक्त करने में अहम भूमिका निभाता है। प्रकृति को हरा भरा रखने, जलस्रोत को स्वच्छ रखने का कार्य भी ग्रीन क्लब करता है।

पूर्वी सिंहभूम के पोटका प्रखंड का एक गांव है – पोड़ा भूमरी। यह गांव आदिवासी बहुल गांव है। जहां आदि काल से ही हो, भूमिज, संथाल, तांती और लोहार समुदाय के लोग मिल जुल कर रहते आ रहे हैं। ये सब अपने-अपने पारंपरिक रीति रिवाजों के साथ ग्राम सभा को चलाते आ रहे हैं। सभी समुदाय एक दूसरे के रीति रिवाज का सम्मान करते हैं। हर पर्व त्योहार मिल जुल कर मनाते हैं।

इस गांव में 'संवाद' पिछले 9 वर्षों से ग्राम सभा सशक्तिकरण का कार्य कर रही है। संस्था का उद्देश्य है कि ग्राम सभा सशक्त होकर स्वशासन, स्वावलंबन और स्वाभिमान की दिशा में आगे बढ़े। परियोजना के तहत गांव में ग्राम सभा के स्थायी समिति का गठन, ग्राम सभा सचिवालय के कार्यालय का निर्माण, किशोर-किशोरियों के ग्रीन क्लब का गठन महिला किसान संगठन का गठन एवं वृक्षारोपण जैसे कार्य चलाये जा रहे हैं। इस गांव में ग्रीन क्लब काफी सक्रिय है। जैसे ही आप गांव के अंदर प्रवेश करते हैं, सड़कें साफ-सुथरी कूड़ा कचड़े का नामोनिशान नहीं। सड़कें तो ऐसी दिखती है मानो किसी घर का लिपा पुता आंगन हो। टीन को काटकर कचड़ा डिब्बा बनाया जाता और बिजली के खंभे पर उसे टांग कर रखा गया है और उस पर लिख दिया जाता है - 'कूड़ा-कचड़ा यहां फेंके।' घर की दीवारें भी कलात्मक रूप से सजी संवरी। पर यह एक दिन में नहीं हुआ इसके लिए किशोर-किशोरियों के साथ कई दौर की बैठकें हुईं। एक कार्यक्रम आयोजित कर वर्ष 2023 में ग्रीन क्लब का गठन किया गया। गठन के पश्चात् उनके मोटिवेशन के कार्यक्रम भी किये गये। उनके साथ निरंतर संपर्क भी बनाये रखना पड़ता है। ग्रीन क्लब से जुड़े सदस्यों का बैठक भी लगभग हर महीने की जाती है। बैठक के दौरान 'संवाद' कार्यकर्त्ता निरसो हांसदा यानी मैं क्लब के सदस्यों के साथ मिलकर उनके हुनर विकास के लिए पत्तल दोना बनाना, झाड़ू बनाना जैसे छोटे-छोटे गतिविधियां भी करती हूं। इससे उनका उत्साह बढ़ता है। क्लब के सदस्यों के बीच खेती किसानी, गांव की स्वच्छता, पर्यावरण बचाने की पहल पर भी चर्चा की जाती। ग्रीन क्लब से जुड़ी किशोरियां आस-पास के वातावरण को स्वच्छ रखने के साथ-साथ अन्य क्रियाकलापों से भी जुड़कर कार्य करती हैं। किशोरियां झाड़ू बनाती हैं पत्तल बनाती हैं। इन बच्चों द्वारा सीड बॉल बनाकर पौधारोपण भी किया जाता है। घर के गीले कचड़े जैसे सब्जी का छिलका इत्यादि से कंपोस्ट बनाकर उससे बाड़ी में सब्जियां भी उगाई जाती है। बाड़ी में उगे टमाटर, साग, बैंगन, कद्दू से घर के सब्जी का खर्च निकलता है ज्यादा होने पर पड़ोसियों में बांटते भी हैं। पर्यावरण के प्रति लोगों को जागरूक करने के लिए इनके द्वारा 5 जून पर्यावरण दिवस के दिन रैली भी आयोजित की जाती है। ग्रीन क्लब के सदस्यों में सुमन बारदा जो दसवीं की छात्रा हैं, लक्ष्मी बारदा जो 12वीं की छात्रा एवं जिया हो जो 10वीं वर्ग के छात्र हैं, अपने क्रियाकलापों से काफी उत्साहित हैं। उनका मानना है कि झारखंड के हर गांव में ग्रीन क्लब बनना चाहिए ताकि गांव स्वच्छ रहे एवं पर्यावरण का संरक्षण संवर्द्धन भी होता रहे। ■

कुछ नया करने की तमन्ना

एनी टुडू

झारखंड की अधिसंख्य आबादी खेती पर निर्भर है और खेती मॉनसून पर आधारित है। हाल के वर्षों में जलवायु परिवर्तन के कारण मानसून पर भी असर हुआ है। समय पर बारिश नहीं होने से खेती प्रभावित हुई है। ऊपर से हमारे किसान बीज एवं खाद के लिए बाजार पर आश्रित हो गये हैं। जिससे खेती महंगी हो गई है। दो सालों से लगातार सूखा पड़ने के कारण कई किसान खेती छोड़कर अन्य कार्य की ओर रूख कर रहे हैं। कई तो प्रवासी मजदूर बनकर पलायन भी कर गये हैं। ऐसे में एक महिला जिसका नाम मकलू मुर्मू है उसने खेती में कुछ नया प्रयोग करने को सोचा। मकलू दुमका जिले के जामा प्रखंड पंचायत बैदिया का एक गांव है भिखमपुर वहां की रहने वाली है। इस गांव में कुल 38 परिवार रहते हैं। गांव आदिवासी बहुल है। प्रखंड मुख्यालय से गांव की दूरी लगभग 40 किलोमीटर है। गांव के लोगों के पास थोड़ी बहुत जो जमीन है उनमें खेती करते हैं, पशु पालन भी करते हैं। प्रखंड मुख्यालय से नजदीक होने के कारण ज्यादातर पुरुष दैनिक मजदूरी कर भी आजीविका चलाते हैं। मकलू अपने पति एवं दो बच्चों के साथ रहती है। खेती से परिवार का गुजारा ठीक से नहीं हो पाता था जिस कारण मकलू का पति कुंडू मुर्मू दुमका जाकर मजदूरी भी करते हैं फिर भी घर चलाना मुश्किल होता था। इधर कई वर्षों से 'संवाद' टिकाऊ आजीविका के लिए कार्यरत रहा है। किसानों के प्रशिक्षण देने के साथ-साथ उनके आय में कैसे वृद्धि हो सके इसके लिए भी प्रयासरत है। मकलू मुर्मू भी 'संवाद' द्वारा आयोजित जलवायु अनुकूलन खेती एवं आय वृद्धि को लेकर हुए प्रशिक्षण शिविरों में भाग लेते रही है। प्रशिक्षणों के कारण उनमें आत्मविश्वास आया कि खेती में यदि कुछ नया प्रयोग करें तो आय में वृद्धि हो सकती है। उसने अपने खेतों में गन्ना लगाने के बारे सोचा, परंतु उसके निर्णय को परिवार

के लोग तुरंत नहीं सहमति दिये। परिवार को समझाना भी एक बड़ा टास्क उसके लिए था। बहुत समझाने पर उसके पति मान गये एवं उसे गन्ना लगाने की अनुमति मिली। जून 2024 को उसने एक बीघा जमीन पर 10,000 की लागत से गन्ना की खेती की।

अभी उसके खेत में गन्ना की फसल लहलहा रही है। गन्ना तैयार होने पर उसे बाजार भी जाना नहीं पड़ा। खेत में ही खरीददार आकर उसके पूरे गन्ने को अस्सी हजार रुपये में खरीद लिये। इस प्रकार उसे गन्ने की खेती से कुल सत्तर हजार रुपये की आमदनी हुई। इसकी आमदनी को देखते हुए गांव की अन्य महिलायें रीता रानी किस्कू, बिटिया बास्की, मालोती सोरेन आदि भी खेती में कुछ नया करने का सोच रही है। आज गांव में मकलू अन्य महिलाओं को प्रेरणा दे रही है साथ ही झारखंड महिला किसान संगठन का गौरव भी बढ़ा रही है। महिला किसान मकलू को हमारा झारखंडी जोहार! वह खेती में नित नये प्रयोग करें, अपनी पहचान बनायें। 'संवाद' परिवार की ओर से उन्हें बधाई एवं शुभकामनायें। ■

अपना स्वास्थ्य, अपने हाथ

सीमा

देवघर जिले के मधुपुर प्रखंड की गंड़िया पंचायत के अंतर्गत एक गांव है – चुंगलो। इस गांव में लगभग 67 परिवार है। वर्ष 2017 से 'संवाद' यहां ग्राम सभा सशक्तिकरण का कार्य कर रहा है। ग्राम सभा की स्थायी समितियां यहां सक्रिय हैं एवं लगातार उनकी बैठक होती रहती है। बैठकों में विभिन्न विषयों पर लगातार चर्चा होती है।

स्वास्थ्य समिति की बैठक में स्वास्थ्य के बारे चर्चा होने पर पहले महिलायें इस पर बात करने से हिचकती थी। फिर धीरे-धीरे 'संवाद' कार्यकर्त्ता की मदद से वे बात करने लगी। महिला बैठकों में महिलाओं के मासिक धर्म एवं उनसे जुड़ी समस्याओं पर भी खुलकर बात होने लगी। किशोरियों के साथ भी बैठकों के दौरान मासिक धर्म के समय स्वच्छता और सफाई रखने संबंधी, माहवारी शुरू होने एवं बंद होने का उम्र, माहवारी के समय बरतने वाली सावधानी इत्यादि पर चर्चा होती रहती है जैसे माहवारी के दौरान स्वच्छता बनाये रखना बहुत जरूरी है। सैनेटरी पेड एवं टेम्पोन को नियमित रूप से बदलना चाहिए। साफ और सूखे कपड़े पहनना चाहिए। पैड या टेम्पोन के इस्तेमाल के पहले हाथों को साफ पानी या साबुन से धोना चाहिए। इस्तेमाल किये गये सैनिटरी पैड या टेम्पोन का निष्पादन इत्यादि। आहार से संबंधित जानकारी भी उन्हें दी जाती है कि उस समय संतुलित आहार लेना चाहिए। पानी खूब पीना चाहिए। स्वास्थ्य समिति की एक विशेष बैठक 19 मई 2024 को आयोजित हुई थी उसमें गांव में ही सैनेटरी पैड बनाने पर चर्चा हुई। इसका कारण यह था कि गांव में अभी भी अधिकतर महिलायें एवं लड़कियां मासिक धर्म के समय कपड़े का उपयोग करती हैं। कपड़े ठीक से नहीं धुले एवं सूखे नहीं होने से उनमें संक्रमण का खतरा पैदा होता है। दूसरा कारण यह भी है बाजार के सैनेटरी पैड काफी महंगे भी होते हैं। पैड बनाने पर सबके सहमति के बाद इसके पूंजी के लिए सरकार से अनुदान प्राप्त करने की मांग की गई। सरकार इस कार्य के लिए मशीन व सामग्री मुहैया कराती रही है। सरकार द्वारा सखी स्वयं सहायता समूह को 2024 के जुलाई महीने में मशीन व पैड बनाने की सारी सामग्री मुहैया करा दी गई। समूह की 9 महिलायें पूनम देवी, सोना मंडल, सुमा देवी, उर्मिला देवी के अलावा रीया कुमारी, काजल कुमारी, किरण देवी, मीना देवी, सविता देवी शामिल है। ये महिलायें प्रतिदिन 100 से 150 पैड बना रही हैं। एक पैकेट में 10 पैड रहता है। वर्तमान में 200 पैकेट की बिक्री से 4000 रु. मुनाफा हो रहा है। मुनाफे के साथ एक लाभ यह भी हो रहा है कि महिलायें संक्रमण से बच रही हैं। जरूरत है इस मुहिम को हर गांव में चलाने की ताकि आर्थिक उपार्जन के साथ-साथ महिलाओं के स्वास्थ्य भी सुरक्षित रहे। ■

जहां चाह वहां राह

महजबी परवीन

मन में अगर चाहत हो और किसी भी काम को मनोयोग से किया जाए तो सफलता अवश्य मिलती है। यह कहानी उन 35 महिलाओं के जज्बे को दर्शाती है जो इटकी ब्लॉक के कुंदी गांव में रहती हैं। कुंदी गांव रांची शहर से 46 किलोमीटर की दूरी पर अवस्थित है। इस गांव में कुल 1195 परिवार निवास करते हैं जिसमें 750 आदिवासी परिवार, 150 सामान्य जाति परिवार तथा 295 मुस्लिम परिवार हैं।

यहां के लोगों की मुख्य पेशा खेती है। इसके अतिरिक्त लोग मजदूरी भी करते हैं। खेती के समय तो लोग खेती करते हैं लेकिन बाकी के दिनों में वे बेकार रहते हैं। इनमें से कुछ लोग रांची तथा इसके आसपास मजदूरी करने चले जाते हैं। सबसे खराब स्थिति महिलाओं की हो जाती है - खेती के समय तो वे खेती में अपना योगदान देती हैं परंतु घर-परिवार को न छोड़ पाने के कारण वे बाकी समय खाली ही रहती हैं।

'संवाद' ने वर्ष 2021 से इस क्षेत्र में काम करना शुरू किया। कार्य के दौरान 'संवाद' के कार्यकर्त्ता महिला समूहों से मिलते रहे। महिला सशक्तिकरण के कार्यक्रम के दौरान 'संवाद' कार्यकर्त्ताओं को यह पता चला कि महिलायें आजीविका के लिए कुछ करना चाहती है। अपनी आजीविका हेतु अतिरिक्त आमदनी करना चाहती हैं। परंतु गांव में उनके लिए कोई अवसर उपलब्ध नहीं था। कई दौर की बातचीत के बाद यह समझ में आया कि इन महिलाओं को चूड़ी बनाने के काम में रुचि है। इस निर्णय के पश्चात 'संवाद' की कार्यकर्त्ता महजबी परवीन ने रांची आकर 'आरएसईटीआई' (ग्रामीण स्वरोजगार प्रशिक्षण संस्थान) अधिकारियों से मुलाकात की। 'आरएसईटीआई' महिला समूह को प्रशिक्षण देने में मदद करता है। महजबी ने अधिकारियों को महिलाओं के समूह के बारे बताया तथा

उनकी इच्छा भी बताई कि महिला समूह चूड़ी बनाने का प्रशिक्षण लेना चाहती हैं। 'आरएसईटीआई' ऑफिस के अधिकारी महिला समूह को प्रशिक्षण देने को मान गये। 'आरएसईटीआई' के अधिकारियों ने महिलाओं के सुविधानुसार प्रशिक्षण की व्यवस्था कुंदी गांव में ही की। सभी औपचारिकता पूरी होने के पश्चात 35 महिलाओं के लिए पंचायत भवन कुंदी में प्रशिक्षण दिनांक 1 मार्च 2024 से 15 मार्च 2024 तक आयोजित किया गया।

प्रशिक्षण के उपरांत महिलाओं ने आवश्यक उपकरणों और चूड़ी बनाने के सामानों की खरीद की। ये महिलायें सामान्यतः घर में लगाने वाले बचे हुए मार्बल के टुकड़ों को चूड़ी बनाने में इस्तेमाल करती हैं। अभी ये सारी महिलायें चूड़ी बनाकर उन्हें स्थानीय बाजारों में बेच रही हैं। वे ज्यादा मात्रा में चूड़ी बनाकर बड़े पैमाने पर स्थानीय और शहर के बाजारों में बेचकर मुनाफा कमाना चाहती हैं। उनके हौसले बुलंद है पर चुनौतियां भी हैं। सामाग्री की उपलब्धता के साथ-साथ बड़े पैमाने पर बाजार मिलना प्रमुख चुनौती बनकर इनके सामने खड़ा है। ऐसी महिलाओं द्वारा बनाये गये उत्पादों की बिक्री के लिए बाजार मुहैया कैसे हो? इसकी समुचित व्यवस्था सरकार द्वारा की जानी चाहिए ताकि इन महिलाओं के हौसले को बल मिल सके। ■

ग्रामीण मिनी मार्ट : सशक्तिकरण की पहचान

अमित कुमार

झारखंड राज्य का दक्षिणी इलाका जिसे लोग दक्षिणी छोटानागपुर के नाम से जानते हैं। उसी दक्षिणी छोटानागपुर का रांची जिला जो राज्य की राजधानी भी है। रांची जिले के बेड़ो प्रखंड के अंतर्गत एक छोटा सा गांव है – चरिमा, जहां की कुल आबादी लगभग 794 है।

इस गांव के लोगों की मुख्य आजीविका खेती है। खेती भी मानसून पर आधारित है। उसी गांव की एक महिला जिसका नाम फूलमनी उरांव है, वालमार्ट की तर्ज पर अपना किराना दुकान ''ग्रामीण मिनी मार्ट'' चला रही हैं। दुकान की संचालिका फूलमनी बताती हैं कि दुकान खोलने से पहले मैं भी एक साधारण महिला की तरह घरेलू कार्यों के साथ-साथ खेती कार्य भी करती थी। खेती ही आजीविका का मुख्य आधार था। वर्ष 2022-23 में सूखा पड़ा और खेती ठीक से नहीं हो पायी। हमलोग खेती में मुख्यतः धान उपजाते हैं जिससे दो वक्त का खाना तो हो जाता है पर अन्य जरूरतों की पूर्ति नहीं हो पाती है।

मेरे मन में हमेशा यह चिंता रहती थी कि क्या किया जाय। गांव में एक बैठक में मैं सुमित्रा दीदी से मिली जो 'संवाद' से जुड़कर ग्राम स्वशासन और खेती किसानी पर कार्य करती हैं। उन्होंने मुझे महिला किसान संगठन के बारे बताया कि यह संगठन महिलाओं को किसान के रूप में पहचान एवं भूमि पर महिलाओं को अधिकार कैसे मिले इस पर कार्यरत है। उन्होंने मुझे जैविक खेती और उससे होने वाले फायदे के बारे बताया। बातचीत के दौरान ही मुझे पता चला कि सुमित्रा दीदी जैविक खेती पर प्रशिक्षण भी देती हैं और जैविक खेती से संबंधित सामानों का दुकान भी खोली है।

उनकी बातों से ही प्रेरणा पाकर मैंने सोचा कि क्यों न मैं भी एक दुकान खोलूं। मेरे मन में यह ख्याल आया कि गांव के लोगों को किराना का सामान रोज चाहिए और ऐसा अच्छा दुकान गांव में नहीं है। परंतु दुकान खोलने के लिए पूंजी चाहिए होता है और मेरे पास पूंजी नहीं था। दीदी के सलाह

पर मैं एक स्वयं सहायता समूह से जुड़ी। कुछ दिन समूह में बचत करने के बाद मैंने समूह से 1 लाख रूपये का लोन लिया। बहुत ही कम लागत से एक कमरा बनवाया और थोड़े बहुत सामानों के साथ दुकान की शुरूआत की।

दुकान में सामानों की बिक्री से जो भी लाभ होता ऋण भी चुकाती गयी और बाकी पैसे से अन्य सामान भी खरीदने लगी। लोगों की जरूरतों को देखते हुए दुकान में जेरोक्स मशीन भी लगवा लिया है। फोन रिचार्ज की सुविधा भी मेरे दुकान में है। अब मेरा दुकान अच्छा चलने लगा है और महीने में 10-15 हजार तक का मुनाफा कमा रही हूं। घर अच्छे से चलने लगा है। अब अन्य जरूरतों के लिए दूसरे का मुंह ताकना नहीं पड़ता है।

दुकान के कारण मेरे अंदर आत्मविश्वास आया है कि मैं भी आय अर्जित कर सकती हूं। स्वयं के लिए आय अर्जित करने की क्षमता न केवल आर्थिक स्वतंत्रता प्रदान करती है, बल्कि घरेलू मामलों में भी महिलाओं को अधिक अधिकार और सशक्त प्रदान करती है। महिलायें जब सशक्त होती है तो अपने खिलाफ होने वाली हिंसा को पहचान पाती है और उसके विरोध में आवाज भी उठाती है। आज फूलमनी को देखकर गांव की अन्य महिलायें भी आर्थिक स्वावलंबन के बारे सोच रही हैं कुछ करने के लिए आगे आ रही हैं। ■

जलवायु संकट समाधान में महिला भागीदारी

पूजा कुमारी

आज पूरी दुनिया में जलवायु परिवर्तन एक वैश्विक संकट बनकर उभरा है। जलवायु परिवर्तन के कारण समाज में व्याप्त लैंगिक असमानताएं और गहरी हो जाती हैं जिससे कमजोर और हाशिये पर रहने वाले समूहों की महिलाओं को जलवायु जनित चुनौतियों की कठोर वास्तविकता का सामना करना पड़ता है।

भारत में अनगिनत महिलाएं प्रतिदिन जलवायु परिवर्तन के दुष्प्रभावों को झेलती हैं। इसलिए शायद महिलाओं को जलवायु संकट के पीड़िता के रूप में ही दर्शाया जाता है। परंतु एक सच यह भी है कि भारत में हजारों महिलायें स्थानीय संसाधनों के माध्यम से जलवायु परिवर्तन के समाधानों को आगे बढ़ाती हैं और अपने नेतृत्व के माध्यम से समुदाय के प्रतिरोधक क्षमता का निर्माण भी करती हैं।

ऐसी ही एक उदाहरण हमें झारखंड के जामताड़ा जिले के उदलबानी पंचायत के आसनचुवान गांव में देखने को मिलता है। इस गांव की 30 महिलाओं का एक समूह वृक्षारोपण के लिए नर्सरी तैयार कर रहा है। 'पर्यावरण को अगर बचाना है तो हमें अधिक से अधिक पेड़ लगाने होंगे' इस सोच के साथ ये महिलायें आगे बढ़ रही हैं।

परंतु इनके सोच में सकारात्मक परिवर्तन लाने का श्रेय कहीं न कहीं 'संवाद' को जाता है। 'संवाद' के उत्प्रेरण और मार्गदर्शन से दो स्वयं सहायता समूह - रानी आजीविका सखी मंडल एवं पूनम आजीविका सखी मंडल की 30 महिलायें संगठित हुई और नर्सरी के काम को आगे बढ़ाने का निर्णय लिया। 'संवाद' के साथियों ने महिलाओं को 'आत्मा' (एग्रीकल्चर टेक्नोलॉजी मैनेजमेंट एजेंसी) से जोड़ने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। 'आत्मा' से जुड़ने के पश्चात इन्होंने सहयोग के लिए वहां आवेदन दिया। इनका आवेदन स्वीकृत भी हो गया और सहयोग के रूप में इन्हें नर्सरी सेड, पानी की टंकी, पॉली बैग, खाद एवं अन्य सामग्री मिली। अपने समूह की 30,000 रूपये की पूंजी लगाकर इन्होंने सहजन, आम, अमरूद, नीम इत्यादि पौधों की नर्सरी शुरू की। पहले ही साल इनकी बिक्री से इन्हें 60000/- रूपये की आमदनी हुई। अपनी सफलता को देखते हुए महिलाओं ने इस काम को आगे बढ़ाने का निश्चय किया।

इस काम ने उन्हें समाज में एक नई पहचान दिलाई। पर्यावरण को बचाने के साथ-साथ महिलाओं की आजीविका भी सुनिश्चित हुई। इनसे प्रेरणा पाकर गांव की अन्य महिलायें भी इस तरह के कार्य करने में आगे आ रही हैं। महिलायें जब आर्थिक रूप से सशक्त होती हैं तो परिवार एवं समाज दोनों जगह उन्हें एक नयी पहचान मिलती है। उनके निर्णय का सम्मान भी दिया जाता है। आज जामताड़ा की महिलायें अन्य महिलाओं के लिए प्रेरणा बन रही हैं। ■

पे फुडुः सासाड़ (तीन दोना हल्दी)

डा. कृष्ण चन्द्र टुडू

मैदानी इलाका। झाड़ जंगलों का नामों निशान नहीं हैं। सिर्फ जंगली घास 'पुरू' की झाड़ी चारों ओर छायी हुई है। काले-काले पत्थरों का छोटा-सा पहाड़ है। जेठ महीने की तपती धूप के सोमवार का दिन है। सूरज चढ़ता जा रहा है। साथ-साथ शुष्क हवा बहने लगी है। छोटे-छोटे पौधों की पत्तियां सूरज के तेज धूप से मुरझा रही हैं। जितना सूरज चढ़ता जा रहा है उतनी ही धरती का ताप भी बढ़ रहा है। गर्म हवाओं के झोंके से पेड़ के 'झिंगूर' भी रोने लगे हैं। ऐसी तेज गर्मी के वक्त एक पथिक अपने रास्ते जा रहा है। आज उसके शरीर को धूप नहीं लग रही है। जमीन में भी ताप नहीं है। रास्ते में चलने वाला पथिक चल ही रहा है। वह अपने मुकाम की ओर चला जा रहा है। ऐसे समय में काले-काले पत्थरों के कारण तपते पहाड़ की ओट से एक सियार, उसके सामने से दौड़कर पार हुआ और कुछ दूर जाकर दिन में ही रोने लगा। ''भेव भेव ठो'', ''भेव भेव ठो'', ''भेव भेव ठो''। यह आवाज सुनकर पथिक के शरीर में रोगंटे खड़े हो गए। कुछ देर तक वह वहीं खड़ा रह गया। कुदरत का यह दृश्य देखकर पथिक किंतर्कव्यविमूढ़ हो गया।

रास्ते से कुछ दूरी पर स्थित, एक नीम पेड़ के नीचे बैठे सुगदा मांझी ने मन ही मन कहा ''यह डुंगरीडीह गांव का सीदाम मांझी ही है! जिसके साथ मैं बचपन में एक ही स्कूल में पढ़ा लिखा एवं खेला। आज वही मुझको नहीं पहचान रहा है। पहचानेगा कैसे? वह तो पढ़-लिखकर बड़ा आदमी बन गया, कलकत्ता जैसे बड़े नगर में नौकरी जो कर रहा है? इतना पढ़-लिखकर भी हमारे समाज के रीति-रिवाज को ठीक से नहीं सीख पाया है। सीखा भी था तो वह सब मूल्यवान रीति रिवाज को भूल गया है। आज वह भूल गया है-मनुष्यों के सामने से सियार के दौड़कर पार होने का शकुन-अपशकुन क्या है। दिनों में कराज सियार

के रोने की आवाज का तथ्य क्या है?''

उधर सीदाम के गांव डुंगरीडीह में ही सीदाम की मां सबकी दया-माया, प्रेम तोड़कर श्मशान की ओर जा रही है। जेठ महीने की तपती धूप में भी उनको धूप, लग नहीं रही है। गरम हवा में भी उनको गर्मी नहीं लग रही है। शरीर के सारे अंग बर्फ जैसे ठंडे पड़ गए हैं। घर के बाल-बच्चे, गांव के लोग तथा रिश्तेदार रहते हुए भी आज वह अकेली है। गांव के कूल्ही-मूढ़ा के चौराहे में सोई हुई है, दक्षिण दिशा की ओर सिर किये हुए छोटी-सी खटिया में। गांव के पंच-परगना, लोग शांत बैठे हुए हैं। ऐसे समय में सीदाम अपने गांव डुंगरीडीह की ओर जा रहा है। सीदाम को देखकर पंचपरगना के लोग इधर-उधर भागने लगे। कुछ लोग छुप गए। गांव के लोगों को इधर-उधर देख भागते देखकर सीदाम सोचने लगा- ''किनको क्या हुआ? ओह! इन्होंने मुझे नहीं पहचाना होगा? कहीं ये लोग मुझे देखकर तो नहीं डर रहे हैं?''

सीदाम की यह बात सुनकर खाट के पास बैठे हुए

उसके बड़े भाई दशमात ने कहा ''बाबू आज हमारे गांव के लोग तुमको देखकर नहीं डर रहे हैं और ना ही भाग रहे हैं और न ही तुमको नहीं पहचान रहे हैं। बल्कि आज तुमको अच्छी तरह से पहचाना इसलिए यह लोग हट गए हैं।'' यह बात सुनकर सीदाम ने कहा- ''दादा यह मृत शरीर किसका है?''

दशमात ने कहा - ''ये मृत शरीर मां का है। ''जैसे ही मां का मृत शरीर सुना वैसे ही सीदाम खटिया की तरफ दौड़कर चला जा रहा था। तब उस समय तुरंत ही दशमात ने कहा - ''बाबू सीदाम, रूको। मां का मृत शरीर मत छुओ।'' तब सीदाम ने कहा- ''मां का पुत्र होते हुए भी मां का मृत शरीर क्यों नहीं छुऊंगा? दशमात बोला - ''हां तुम नहीं छू सकते हो। तुम्हारे शरीर में संतालों का खून बह रहा है। जैसे खून के बगैर शरीर जीवित नहीं रह सकता है, पानी के बगैर पेड़ जीवित नहीं रह सकता है, वैसे ही किसी निश्चित जाति के बगैर, किसी निश्चित समाज का गठन नहीं हो सकता है। इस युग में तुम धर्म बदल सकते हो, भाषा बदल सकती है, खान-पान, पहनावे बदल सकते हो। लेकिन संताल जाति और समाज को नहीं बदल सकते हो।''

''आज तुम संताल समाज के घर में दूसरी जाति की बहु लाए हो। समाज को तुमने गंदा किया है। समाज के आदमियों को तुम भूल गए हो। समाज का रीति-रिवाज तुमने नहीं माना है। इसलिए संताल समाज के लोगों ने तुमको आज छोड़ दिया है। बाबू, समाज तुम्हारा है, समाज मेरा भी है और सबका है। समाज के रीति-रिवाज सबको मान्य हैं। समाज के लोगों को तुम मानोगे तो तुमको भी समाज मानेगा। आज समाज के लोग तुमको पकड़े हैं। तुम्हारी दूसरी जाति की बहू की कोख में तुम्हारी अमानत पल रही है। अब तुम ही बताओ, दूसरी जाति की बहू के कोख में छोटा-सा पौधा अंकुरित हो रहा है। क्या तुम उसको समाज में लाओगे? या मां के मृत शरीर का दूसरी जाति के हाथों से श्राद्ध करवावगे?

यह बात सुनकर सीदाम ने कहा-''मां के मृत शरीर का समाज के लोगों के द्वारा ही अंतिम संस्कार किया जाए। और जो मैंने अन्याय किया है उसके लिए मैं ''तीन दोना हल्दी'' देने का वचन देता हूं। ताकि हमारा समाज निर्मल, स्वच्छ, सख्त हमेशा रहे। दादा तब मैं कलकत्ता जा रहा हूं। मां के मृत शरीर को मैं नहीं छुऊंगा। तीन दोना हल्दी, तेल, पानी से नहाऊंगा। मेरे ''तीन दोने हल्दी'', देने की बात समाज में रखें। लेकिन यह प्रथा केवल लड़कों पर ही क्यों प्रचलित है। लड़कियों पर क्यों नहीं? लड़कियों को क्यों नहीं? लड़कियों को क्यों 'बिटलाहा' अर्थात समाज से निष्कासित किया जाता है? कृपया पंच परगना से इसका समाधान निकालने का प्रयास करें। यही मेरी इच्छा है। यह कहकर सीदाम अपनी मां के मृत शरीर को प्रणाम कर कलकत्ता चला गया 'तीन दोना हल्दी' लाने के लिए। ■

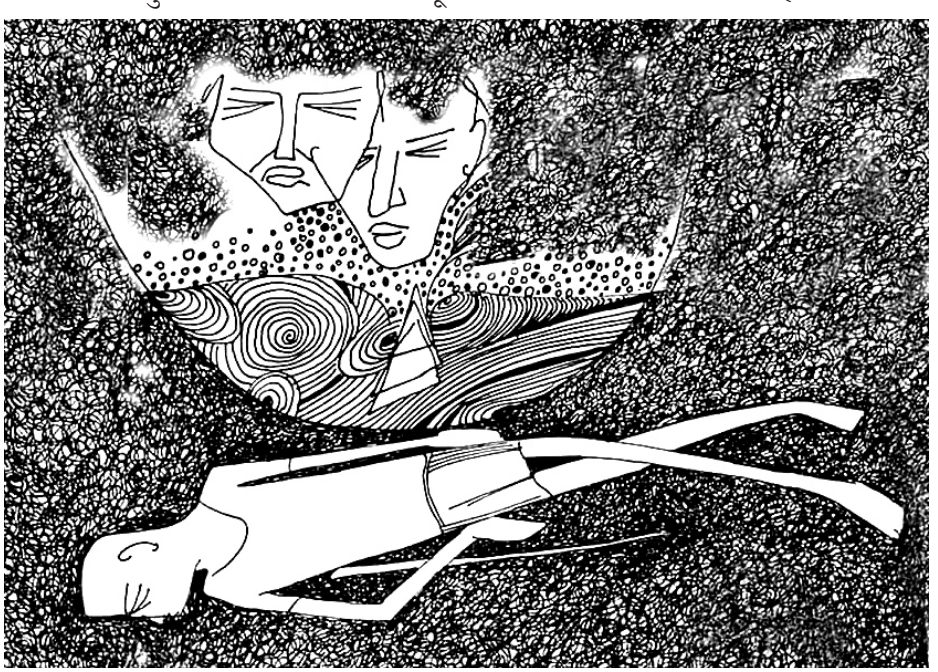

महिला किसान की जीवन-यात्रा

सुमित्रा कुजूर

मेरा नाम सुमित्रा कुजूर है। मेरा जन्म मेरे नाना के घर, छोटा जिलंगा गांव, जिला गुमला (झारखंड) में हुआ। मेरी मां मेरे जन्म से पहले ही मेरे पिता से अलग हो चुकी थीं, क्योंकि पिता अत्यधिक नशा करते थे और मां के साथ मारपीट भी करते थे। इस वजह से नाना मेरी मां को ससुराल से अपने घर ले आए। इसके बाद मैं और मेरी मां, नाना-नानी के साथ रहने लगे।

मैंने गांव से दो किलोमीटर दूर आरसी प्राथमिक विद्यालय, महुआ टोली में दूसरी कक्षा तक पढ़ाई की। फिर तीसरी से पांचवीं कक्षा तक गुमला के लूथरन मिडिल स्कूल में, अपनी बड़ी मां के पास पढ़ाई की। लेकिन वहां हमेशा पारिवारिक झगड़े होते थे, इसलिए मुझे फिर नाना के घर लौटना पड़ा। गांव से स्कूल की दूरी 14 किलोमीटर थी, जिसे मैं पैदल तय करती थी। सुबह 7 बजे निकलती और 9 बजे स्कूल पहुंचती। लौटते समय अंधेरा हो जाता। इन कठिनाइयों के कारण मैंने गांव के राजकीय मध्य विद्यालय, गढ़टोली में आठवीं कक्षा तक पढ़ाई की।

घर की आर्थिक स्थिति बहुत खराब थी। मां को लकड़ी बेचकर घर चलाना पड़ता था। जब मैं आठवीं में थी, तो परिस्थितियों से परेशान होकर घर से पलायन करने का विचार आया। एक रात मैं सामान पैक कर घर से निकलने ही वाली थी, कि मेरी मौसी ने दरवाज़ा घेर लिया और पूरी रात बैठी रही। इस वजह से मैं घर से निकल नहीं सकी।

आगे चलकर मैंने नवीं और दसवीं की पढ़ाई राज्य संपोषित उच्च विद्यालय, गुमला में की और वर्ष 2002 में मैट्रिक की परीक्षा द्वितीय श्रेणी में उत्तीर्ण की। मेरी मां ने मेरी मैट्रिक पास करने से पांच साल पहले दूसरी शादी कर ली थी। मेरे सौतेले पिता की दो बेटियां पहले से थीं और बाद में मां से एक बेटा भी हुआ। वे गुमला में किराये के मकान में रहते थे।

मैं नाना-नानी के साथ ही रहती रही। उनके गुजर जाने के बाद मामा, मामी और मौसी का व्यवहार हमारे साथ अच्छा नहीं था। मैं इधर-उधर भटक रही थी, तभी मां ने मुझे अपने पास बुला लिया। मैट्रिक के बाद मैंने ईंट भट्ठा में और कभी-कभी रेजा (मजदूर) के रूप में काम किया। खेती के मौसम में खेती-बाड़ी भी करती थी।

कॉलेज में दाखिले के लिए मेरे पास कुछ पैसे थे और कुछ मां ने दिए। आने-जाने का भाड़ा निकालने के लिए सब्जी बेचने लगी और छुट्टियों में रेजा का काम भी करती थी। इस दौरान मुझे चादर बुनाई का प्रशिक्षण भी मिला, लेकिन पूंजी के अभाव में वह काम शुरू नहीं कर सकी।

हम तीन बहनें और एक भाई हैं। एक बार सौतेली बहन से झगड़ा हुआ और मैं मामा-मामी के घर चली गई। वहीं रहते हुए इंटर की परीक्षा दी। परीक्षा के बाद 30 दिन का पशुपालन और पशु चिकित्सा प्रशिक्षण लिया और दो साल तक इसी में काम किया, जिससे कुछ आमदनी होने लगी।

इंटर पास करने के बाद मैंने कार्तिक उरांव

महाविद्यालय, गुमला में दाखिला लिया और काम की तलाश में जमशेदपुर अपनी सहेली के पास चली गई। वहां मार्केटिंग का काम किया और लगभग दो साल तक रही। फिर घर लौट आई। अब मां को मेरी शादी की चिंता सताने लगी थी। हम किराये के मकान में रहते थे। मां चना-मिक्चर बेचती थीं और पिताजी प्राइवेट गाड़ी चलाते थे।

मेरा मन था कि पहले घर बनाकर फिर शादी करूं, लेकिन मां का कहना था कि उम्र निकल जाने के बाद लड़की को बहुत कुछ झेलना पड़ता है। उसी समय, 2008 में बेड़ो चरिमा गांव से रिश्ता आया और 31 जनवरी 2009 को मेरी शादी बड़े ही सादगीपूर्वक ढंग से संपन्न हुई।

मेरी शादी संयुक्त परिवार में हुई। परिवार में सास-ससुर, देवर-गोतनी, जेठ-जेठानी, चाचा-चाची, सभी एक साथ रहते थे। मेरे ससुर पशुपालन करते थे और प्रतिदिन 10–20 लीटर दूध बेचते थे। हम सब मिलजुलकर रहते थे। इसी बीच, 11 मई 2010 को मेरे बड़े बेटे का जन्म हुआ।

बच्चा दो महीने का था जब मैंने एक प्राइवेट स्कूल में पढ़ाना शुरू किया, जहाँ ₹ 2000 मानदेय मिलता था। लेकिन धीरे-धीरे पति नशे के आदी हो गए। ट्रैक्टर का लोन लिया था, जिसकी किश्त समय पर नहीं चुकाने के कारण ट्रैक्टर बैंक ने जब्त कर लिया। परिवार में झगड़े बढ़ने लगे। देवर की शादी के बाद भी सब कुछ ठीक नहीं हुआ। एक दिन छोटा देवर से झगड़ा हुआ, उस समय मैं गर्भवती थी और स्कूल छोड़ चुकी थी। सिर्फ 18 दिन बाद, 13 अगस्त 2015 को मेरे छोटे बेटे का जन्म हुआ और हमारा परिवार संयुक्त परिवार से अलग हो गया।

उस वर्ष खेती नहीं हो सकी और हम गंभीर आर्थिक संकट में आ गए। पति कभी-कभी मनरेगा के तहत काम करते थे। फिर मैंने महिला समूह से ₹ 30,000 और आरोहण संस्था से ₹ 15,000 का लोन लिया। मटर और मिर्च की खेती शुरू की।

इसके बाद महाजन से 30,000 और उधार लिया। बीज-खाद खरीदकर फिर से मटर की खेती की। मेहनत रंग लाई, फसल अच्छी हुई और दोनों कर्ज चुका दिए।

2020 में हमने भिंडी, करेला, बीन्स आदि लगाया, लेकिन समय पर पानी नहीं मिल पाया, जिससे नुकसान हुआ। उसी वर्ष जुलाई में मैंने टाटा रूरल इंडिया फाउंडेशन (TRIF) में काम शुरू किया। मिश्रित खेती, आम बागवानी और नर्सरी का काम सीखा। 45 दिनों का जैविक खेती और दवा निर्माण प्रशिक्षण लिया और प्रमाणपत्र भी मिला। दो वर्षों तक यह प्रोजेक्ट चला। अब मैं खुद जैविक खेती करती हूं, लोगों को भी इसके लाभ के बारे बताती हूं।

2022 में ट्रैक्टर चलाने का प्रशिक्षण लिया और फिर मुखिया चुनाव में भी भाग लिया। हारने के बावजूद बहुत कुछ सीखा। 1 जुलाई 2023 को 'संवाद परिवार' के माध्यम से जुड़ी। यहां गांव-गांव जाकर लोगों को योजनाओं की जानकारी देना, आवेदन करवाना, लाभ दिलाना और ग्रामसभा बैठकों में भाग लेना मुझे बहुत अच्छा लगता है। इस संस्था ने मुझे सम्मान दिया और मेरे आत्मविश्वास को बढ़ाया।

2023 में हमने अपना छोटा-सा घर बनाया और एक दुकान भी खोली। इस दुकान में जैविक कीटनाशक, जैविक टॉनिक एवं जैविक खाद जो स्वयं मेरे द्वारा बनायी जाती है उसकी बिक्री करती हूं। हालांकि इससे आर्थिक बोझ बढ़ा और फिर से मैंने महिला समूह से ₹ 50,000 का लोन लिया। 100 किलो मटर लगाया, फसल अच्छी हुई है, अगर दाम अच्छा मिला तो मुनाफा भी होगा और लोन चुक जाएगा। नए फसल के रूप में मैंने स्ट्राबेरी की खेती की हैं उसकी फसल भी ठीक है।

आज जब पीछे मुड़कर देखती हूं, तो विश्वास नहीं होता कि कभी ऐसा भी समय था जब मुझे लगता था कि मैं अपने लिए ₹ 1000 का मोबाइल भी नहीं खरीद पाऊंगी, बच्चों को अच्छे स्कूल में नहीं पढ़ा सकूंगी, या कभी अपने पैरों पर खड़ी नहीं हो पाऊंगी। लेकिन मैंने कभी हिम्मत नहीं हारी। कठिनाई आई, तो भी आगे बढ़ती रही।

मेरी ज़िन्दगी संघर्षों से भरी रही, लेकिन हर संघर्ष ने मुझे मजबूत बनाया। आज मैं आत्मनिर्भर हूं, अपने निर्णय खुद ले सकती हूं और समाज में योगदान भी दे रही हूं। यही मेरी सबसे बड़ी उपलब्धि है। ■

वसंत ऋतु और गर्मी में होने वाली बीमारियां और सावधानी

आधी दुनिया डेस्क

वसंत ऋतु में पेड़ के पत्ते झड़ने लगते हैं। नई पत्तियां भी निकलती हैं। इसके साथ ही बागों और जंगलों में तरह-तरह के फूल और फल लगते हैं। ये सारे फूल-फल और नए पत्ते मनुष्य मात्र के लिए भोज्य पदार्थ के अतिरिक्त औषधि के रूप में प्रयोग किए जाते रहे हैं। जब एलोपैथी चिकित्सा के बारे हम नहीं जानते थे तब इन्हीं जड़ी-बूटियों के सहारे हमारे पूर्वज इलाज करते थे इस तरह मानव जीवन का अस्तित्व बचा रहा तो इस मौसम में होने वाली बीमारियों के बारे सभी को कुछ न कुछ जानने की जरूरत है ताकि जब किसी को बीमारी हो तो मदद कर सकें।

1. चेचक यह दो प्रकार का होता है।

(क) बिल्कुल छोटे-छोटे दाने छोटे बच्चों के शरीर में निकल आता है। इससे आमतौर पर मृत्यु नहीं होती। लेकिन बहुत तेज बुखार आता है और बच्चा बेचैन हो जाता है। बुखार के साथ सर्दी-खांसी भी लग जाती है। बच्चा कमजोर हो जाता है। इसमें ठंड से बच्चे को बचाना चाहिए, नहीं तो उसे निमोनिया हो सकता है।

इसमें इलाज के लिए गांवों में लोग बकरी का दूध पूरे शरीर पर मलते हैं। यह तीन दिनों के बाद अपने-आप दब जाता है।

(ख) छोटी माता या चेचक - इसमें पूरे शरीर में दाने निकल आते हैं। बच्चा बुखार से हांफने लगता है। इसमें भी बच्चे को ठंड से बचाना चाहिए। बच्चे के बिछावन और घर के चौखटों में नीम की पत्ती खोंस देना चाहिए। खाने में गरम हलवा, खिचड़ी आदि देना चाहिए। गांववाले इस समय मांस-मछली से परहेज करते हैं। किसी भी तरह की सब्जी उबाल कर खाते हैं। ये सब सावधानी बरतना चाहिए।

यह छूत की बीमारी है। अतः बच्चे को अलग रखना चाहिए। ऊपर के दोनों तरह के चेचक से बचने के लिए गांव के लोग पहले से सावधानी बरतते हैं। गांवों में पेड़ों में लाल चींटी (काईं देमता, हाऊ पोटोम) का घोंसला लेकर घर में पानी में उबाल कर एक-दो चम्मच सारे लोग पी लेते हैं। बाकी बचे पानी को नहाने के बाद एक-दो मग करके शरीर में डाल लेते हैं। वैसे गांव के लोग इस चींटी के अंडे-बच्चे का सेवन करते हैं। यह खाने में तो स्वादिष्ट होता ही है, भरपूर प्रोटीन भी होता है।

2. डायरिया और पीलिया

यह दूषित जल से होने वाला रोग है। कुआं, तालाब, नदी का पानी सूख जाता है। जो थोड़ा-बहुत बचा रहता है, उसे गंदा होने में देर नहीं लगती। अब तो चापाकल का पानी भी प्रदूषित हो गया है। इसलिए पानी उबालकर ही पीना चाहिए। डायरिया के कारण पतला दस्त बार-बार होता है। शरीर का पानी बाहर निकल जाता है। प्यास भी बहुत लगती है अतः साफ उबला पानी पीने से नहीं रोकना चाहिए।

गांवों में डायरिया से बचाव के लिए पहले से लोग तैयारी करते हैं। इमली की नयी पत्ती और फूल को सुखाकर उसका पाऊडर बना कर रख लेते हैं। फिर गरम मांड़ में उसे

घोलकर पीते या भात के साथ खा लेते हैं। बरसात के लिए चूर्ण बनाकर पत्तियों की पुड़िया बनाकर रख लेते हैं।

सखुआ के फल को भी सुखा कर रखते हैं। डायरिया हो या न हो सखुआ का पाउडर बनाकर महुआ को उबालकर उसके पानी से सान देते और खाते हैं। यह भोजन और औषधि दोनों का काम करता है।

पीलिया (जोंडिस) होने पर पलाश के सूखे फूलों की चाय की तरह काढ़ा बनाकर मरीज को देते हैं।

दूसरी दवा मिश्री, गेंठमधु, इसबगोल और अरारोट बराबर मात्र में लेकर पीस कर पाउडर बना लेते हैं। फिर जब भी पानी पीना हो पाउडर फांक लेते हैं।

3. लू लगना झारखंड लू से बचा था लेकिन जंगलों के उजड़ जाने के बाद बहुत तेज गर्मी पड़ने लगी है। खदान और कारखानों के कारण गर्मी और बढ़ जाती है। जिसके कारण लू लगना और मरना अब बढ़ गया है। लू से बचाव के लिए घर से बाहर जाते समय हमेशा छाता लगाना चाहिए। बिना प्यास के भी पानी पीना चाहिए। रूमाल या तौलिया गीला रखकर चेहरा पोंछते रहना चाहिए। प्याज, सफेद प्याज हो तो और अच्छा, उसे काट कर कांख में दबाकर रखते और सूंघते रहते हैं। घर में कुदरूम, इमली, पुदीना आदि का शर्बत पीते हैं। आम हो तो उसे आग में पकाकर नमक और चीनी का घोल (शर्बत) बना कर पीते हैं। लू लग गई हो तो आम को आग में पकाकर गूदे को पानी में घोलकर पूरे शरीर में लगाते हैं। सूखे आंवले को पानी में भिगोकर पानी को पीते हैं। गांवों में भात पकाने के बाद मांड़ निकालते हैं। जब भात थोड़ा ठंडा हो जाता है तब मांड़ और पानी भात में डाल देते हैं। इससे भात नरम भी रहता है, उसका गरमी भी निकल जाता है। दोपहर को पानी भात सब्जी दाल से खा लेते हैं। प्यास लगने पर इसी पानी को पीते हैं।

इस मौसम में जंगल में जिरहूल, कटई और मठा साग खूब मिलता है। इसे मांड़ में पका कर खाते हैं।

4. नाक से खून गिरना या नकसीर फूटना धूप के कारण शरीर गर्म हो जाता है और नाक से खून बहने लगता है। जब किसी को ऐसा हो तो तुरंत पीठ के बल लिटा देना या कुर्सी पर बैठाकर सिर पीछे झुका देना चाहिए। लेटा हो तो तकिया नहीं देना चाहिए। सिर और चेहरे पर ठंडा पानी डालकर शरीर को ठंडा होने तक लिटाए रखना चाहिए।

गांवों में लोग लिटाने के बाद सूखे गोबर का टुकड़ा मरीज को सुंघाते हैं। गोबर छाया में सूखा होना चाहिए। गांवों में बेंग साग का शर्बत पिलाते हैं।

5. आंख आना या आंख लाल होना

इस तरह की कठिनाई से बचने के लिए आंखों के ऊपर ठंडे पानी में गीला किया हुआ रूमाल रखना चाहिए।

6. हड्डी टूटना

आम, जामुन, कटहल आदि के चक्कर में बच्चे अक्सर पेड़ों पर चढ़ जाते हैं और गिरकर हाथ-पैर तोड़ लेते हैं। गर्मी में स्कूल वगैरह बंद हो जाता है। अतः बच्चे कुछ ज्यादा ही नटखटी करते हैं। इसलिए उनकी निगरानी भी करना पड़ता है।

छुट्टियों का उपयोग बच्चों को अपनी सृजनशीलता बढ़ाने में लगा देना चाहिए। वाई-एम-सी-ए- के मरंहादा फील्ड स्टेशन में नर्सरी है। वहां नर्सरी तैयार करने में बच्चे मदद करते हैं। एक ग्लास में खाद भरने का उन्हें दस पैसा दिया जाता था। दिन भर में खेलकूद करते हुए भी बच्चा 100 ग्लास तक खाद भर लेता है। 1-30 बजे के बाद वे घर चले जाते हैं। फिर उनकी मर्जी कम-से-कम धूप से बचते और अपना पाकेट मनी स्वयं जुटा लेते हैं। परिवार के लोगों की जिम्मेवारी बनती है कि बच्चे अपने द्वारा अर्जित पैसे का उपयोग किस तरह करते हैं।

अतः गर्मी में बच्चों को विभिन्न रोगों से बचाने के लिए और उनकी शक्ति का सदुपयोग करने के लिए गांवों में कार्यक्रम उन्हें स्वयं बनवाना चाहिए। उड़ीसा के गांवों में बच्चे नाटक खेलते हैं। दिन में किसी छाया, स्कूल या किसी के दालान का उपयोग करते और नाटक के माध्यम से ईलाज आदि का संदेश देते हैं। ■

शहद से शराब तक का सफर

आधी दुनिया डेस्क

महाराष्ट्र के धूलिया जिले में भील आदिवासियों की संख्या अधिक है। ये आदिवासी तो हैं पर इनके पास जमीन नहीं है। इसलिए ये मजदूरी करते हैं। इनके जीवनयापन का आधार मजदूरी है। इन भूमिहीन मजदूरों से गैर आदिवासी भू-स्वामी बेगार कराते थे। बेगार खटाते वक्त भीलों का शोषण होता था। ये भील आदिवासी अमानवीय शोषण को चुपचाप सह रहे थे।

सन् 1977 ई. में अंबर सिंह नायक के रूप में उभरे। इनके उभरने के पीछे इनका दर्द छुपा था। 1977 ई. के कुछ पहले स्थानीय जमींदारों ने दो भील स्त्रियों से बलात्कार किया। अंबर सिंह को इसकी जानकारी मिली। उनका क्रोध भड़क उठा। जमींदारों के विरूद्ध उन्होंने भीलों को गोलबंद करना आरंभ किया और आदिवासी सेवा मंडल नामक संस्था गठित किया। इसी वर्ष याने 1977 ई. में ही शहादा के भील मजदूरों पर भू-स्वामियों ने गोली चलायी थी। तब सर्वोदयी कार्यकर्ताओं ने अंबर सिंह से मुलाकात की। सर्वोदयी कार्यकर्ताओं और अंबर सिंह ने मिलकर ग्राम स्वराज्य समिति का गठन किया।

शोषित खेतीहर, मजदूर और उपेक्षित लोगों ने संगठित होकर संस्कृति, जाति और कबीले जैसे उपेक्षित मुद्दों पर ध्यान लगाया। इन मुद्दों को लेकर सरकार के सामने प्रश्न उठाये जाने लगे। इसका परिणाम शीघ्र सामने आया। महिलाएं जो शहद की खेती से सबसे अधिक जुड़ी थीं- उनकी समझ में श्रम, स्वामित्व, पूंजी, लाभ, व्यापार आदि की बातें आईं। शहद के उत्पादन में स्त्रियों का श्रम सबसे अधिक लगता है लेकिन मुनाफा मालिक को जाता है। जब स्त्रियों ने देखा कि शहद की मांग के अनुरूप शहद के मूल्य में लगातार वृद्धि हो रही है, लेकिन उस अनुरूप मजदूरी नहीं बढ़ रही है तो उन्होंने शहद उत्पादन और मजदूरी वृद्धि के लिए आंदोलन छेड़ दिया। इतना ही नहीं इन महिलाओं ने जीवन की आवश्यक वस्तुओं के मूल्य वृद्धि के विरूद्ध भी आंदोलन खड़ा किया।

इधर स्त्रियां मूल्य वृद्धि के विरूद्ध आंदोलन कर रही थीं और उधर सन् 1972-73 में भयंकर सूखा पड़ा। सूखे के कारण भूखमरी की स्थिति उत्पन्न हुई। भूखमरी का दर्द सबसे अधिक महिलाओं के हिस्से पड़ता है। मां के साथ बच्चों का जीवन जुड़ा होता है। अतः महिलाओं ने भूख का मुकाबला करने का निर्णय लिया। इन महिलाओं ने पुरुषों को भी साथ लिया। जितनी खाली पड़ी जमीन थी उसपर कब्जा कर खेती करना शुरू कर दिया। जोत-कोड़ के अतिरिक्त सिंचाई का प्रबंध भी उन्हें करना पड़ा। इसके लिए अपने परिश्रम से कुएं और छोटे बांध बनाना प्रारंभ किया।

परती भूमि को आबाद करने के क्रम में पाया गया कि सरकार ने बहुत अधिक जमीन 'वनभूमि' के नाम पर घेर रखी है। स्त्रियों ने ऐसी भूमि पर भी दखल किया। सरकार की नजर इनके प्रयत्नों की ओर गई। सरकार इन पर मेहरबान हुई क्योंकि इनका आंदोलन रक्तपात और लूटपाट से दूर था। इनका आंदोलन सुधारवादी था। बल्कि रचनात्मक था। इन कार्यकलापों से श्रमिक संगठनों के विकास का मौका मिला। साथ ही शहादा क्षेत्र को सरकार की ओर से सबसे अधिक अकाल सहायता मिली।

इस पूरे अभियान में महिलाओं ने बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया। रैलियों में अगुवाई की। खूब चिंतन-मनन और संगोष्ठियां की। इससे विचारों का आदान-प्रदान हुआ। महिलाएं अपने विचारों और सिद्धांतों में पुख्ता हुईं। उन्होंने बहुत सारे नए नारे गढ़े। क्रांतिकारी गीत गाए और जनमत तैयार किए। स्त्रियां हरेक झोपड़ी में गईं। उनका जनसंपर्क रंग लाया। वे पुरुषों में चेतना जगाने में सफल हुईं। पुरुष संघर्ष के लिए तैयार हुए। वे श्रमिक संगठनों के सदस्य बने। जमींदारों से बातचीत चलायी। जमींदारों से वार्ता के

दौरान स्त्रियां अड़ियल और अडिग रहीं। पुरुष कभी-कभी समझौता-परस्ती दिखा जाते थे पर स्त्रियां कभी भी समझौते के लिए तैयार नहीं होती थीं।

दो वर्षों के अंदर इस आंदोलन का सकारात्मक रूप उभरा। हजारों महिलाएं इसमें शामिल हुईं। इनके साथ साने गुरु जैसे आदिवासी महान विचारक, जनकवि जुड़े थे। जब कोई समुदाय अपने उत्पीड़न को समझ जाता है और उत्पीड़न को अपने आंदोलन के माध्यम से व्यक्त करने लगता है तब ऐसा भी वक्त आता है कि वे लिंग आधारित उत्पीड़न के विरूद्ध प्रश्न उठाने लगते हैं। महाराष्ट्र के धूलिया जिले के शहादा क्षेत्र में भी ऐसा ही हुआ।

जैसा कि होता है पितृसत्तात्मक समाज में पत्नी-उत्पीड़न आम दिनचर्या में मान लिया जाता है। लेकिन महिलाएं इसे स्वीकार नहीं करना चाहती हैं। उनका मानना है कि पत्नी-उत्पीड़न के पीछे नशाखोरी मुख्य कारण है। परिणामस्वरूप उन्होंने शराब-विरोधी आंदोलन चलाया। भील आदिवासी महिलाओं का शराब-विरोधी आंदोलन बहुत तीव्र था। वे शराब भट्ठियों में जत्थे के रूप में जाती और शराब बनाने के बर्तनों को चकनाचूर कर देतीं। वे जानती और मानती थीं कि इन्हीं भट्ठियों में उनके पति शराब पीने आते हैं। धन की बरबादी तो करते ही हैं घर जाकर अपनी स्त्रियों की पिटाई भी करते हैं। शराब विरोधी यह आंदोलन 1972 ई. से आरंभ होकर 1973 में भी जारी रहा।

इस आरंभिक सफलता ने स्त्रियों में आत्म-विश्वास और जोश भर दिया। शहादा का शराब-विरोधी आंदोलन अन्य गांवों तक पसर गया। महिलाएं झुंड बनाकर दूसरे-दूसरे गांवों में जाने लगीं। उन गांवों की भट्ठियों को तोड़ डाला। इसी दौरान करमखेड़ा गांव की औरतों ने एक शिविर में भाग लिया। यह शिविर श्रमिक संगठन की महिलाओं ने आयोजित किए थे। शिविर में जन-सुनवाई के तहत करमखेड़ा गांव की महिलाओं ने अपनी इतनी जीवन्त आपबीती सुनाई कि बाकी महिलाएं तैश में आ गईं। वातावरण महिलाओं के अनुकूल था। उन्होंने बताया कि हर रात पति शराब पीकर आते हैं और घर में जमकर उनकी पिटाई करते हैं। उन्होंने लगे हाथ शिविर में आई महिलाओं से मदद की गुहार लगायी।

हाथ कंगन को आरसी क्या? शिविर में उपस्थित महिलाएं मदद की गुहार सुनकर अपने-अपने स्थान पर खड़ी हो गईं। इस यात्रा में जितने भी गांव पड़ रहे थे, सभी से स्त्रियां निकल कर जुलूस में शामिल हो रही थीं। सबसे पहले जुलूस की स्त्रियों ने करमखेड़ा की शराब-भट्ठियों को तोड़ा। भट्ठियां नष्ट करने के बाद वे सीधे थाने पहुंची। उन्होंने थाने का घेराव किया। पुलिस इन्सपेक्टर से सीधा सवाल किया- 'ये शराब की भट्ठियां क्यों नहीं बंद की गईं?' इन्सपेक्टर महिलाओं के तेवर देखकर आतंकित हुए। उन्होंने शराब-बंदी में पूरे सहयोग का आश्वासन देकर छुटकारा पाया। जुलूस इस अप्रत्याशित सफलता से और अधिक शक्ति-सम्पन्न हुआ। जुलूस मोआद गांव जब पहुंचा तब उसका जोश मतवाले हाथी की तरह हो चुका था। वहां उनका काम आसान हो गया क्योंकि गांव के गुंडे तक बिना मुकाबला किए भाग खड़े हुए थे।

महिलाओं का आंदोलन आगे बढ़ा। दो महीने के अंदर गांवों में महिलाओं ने समन्वय समितियां गठित कीं। इससे काम में सहज एकजुटता आई कोई भी महिला किसी भी गांव की समन्वय समिति के पास जाकर शिकायत दर्ज कराती थी, कि उसके पति ने उसकी पिटाई की है। शिकायत दर्ज होते ही गांव की महिलाएं पीड़ित महिला के साथ उसके गांव जातीं और पति की खुलेआम पिटाई करती तथा पति से पत्नी के पैर छूकर माफी मंगवाती थीं।

इस समय पत्नी-पिटाई पति-पत्नी के बीच का निजी मामला माना जाता था- अब निजी मामला नहीं रह गया। किस तरह श्रमिक, भूमिहीन, शोषित आदिवासी महिलाओं ने अपने चिंतन एवं प्रयास से पितृसत्ता की रुढ़िवादी परंपरा को तोड़ा। यह समूची आदिवासी महिलाओं, दलित और शोषित महिलाओं के लिए उदाहरण है संगठन, संकल्प और निरन्तर प्रयास के कारण इन महिलाओं ने दूसरी महिलाओं के सामने मिसाल कायम किया है।

झारखंड का आदिवासी समाज भी नशे की गिरफ्त में है। यहां सिर्फ आदिवासी कहना अनुपयुक्त है। वस्तुतः झारखंड के कृषक और मजदूर समाज बेकारी और शोषण

के दौर से गुजर रहा है। साथ ही नशा लत बन गया है। नतीजा सामने है। सबसे अधिक महिलाओं पर इसका कुप्रभाव पड़ रहा है। ऐसे में महिलाओं को ही नवनिर्माण की पहल भी करना है।

झारखंड में जगह-जगह महिलाओं ने नशा-विरोधी आंदोलन चलाने की कोशिश की लेकिन आंदोलन स्थायी परिणाम नहीं दे सका। क्या शहादा की भील आदिवासी स्त्रियों के आंदोलन से हम कुछ सीख सकती हैं कि आंदोलन कैसे चलाया जाना चाहिए? आंदोलनकारियों को अपनी सफलताओं-असफलताओं का ईमानदारी से विश्लेषण करना चाहिए? विश्लेषण के बाद कमियों को दूर करने की रणनीति बनाना चाहिए?

यदि हां, तो इस दिशा में प्रयास करने का कोई मूल्य चुकाना पड़ेगा, ऐसी बात नहीं है। अवश्य ही प्रयास किया जा सकता है। एक मुद्दा पहले उठाना चाहिए वह भी सुधारात्मक हो, विकास तो करना ही है। ■

मुक्ताकाश

आधी जमीन, आधा आकाश
मेरे हिस्से कर लूंगी मैं।
जीने की ललक सिर्फ
तुम में नहीं,
बाकी है मुझ में भी।
रोशनदान की झिल्ली से
झांकने वाली अंजुरी भर धूप
मेरी ही हथेली पर क्यों है?
खुले आकाश पर निखरी धूप
क्यों नहीं?

मेरे हिस्से की धूप
जो थोड़ी-सी थी,
पसर गई
उस जमीन के टुकड़े पर,
और पहली बारिश से
सोंधी हुई हवा
महका गई शाम।
आंखें खुली तो-वह शाम नहीं थी
वह तो दोपहर की झपकी की
मृगतृष्णा निकली।

मेरे हिस्से की धूप तुमने
रेहन रख ली है।
कि मेरी सुबह बाहर कोहरे
और अंदर धुएं में लिपटी रहे।
पर, पर मैं उगा लूंगी अपने
उड़कर आसमान छू लूंगी,
ऊपर, ऊपर और-ऊपर
मैं मुक्ताकाश की परिन्दा हूं।

- बंदना टेटे

चूंकि सिर्फ सामाजिक समूह ही विश्व-दृष्टि-सम्पन्न-संरचना को जन्म दे सकता है, अतः विश्व-दृष्टि से उत्पन्न तथा कलाकृति के रूप में निर्मित वह सुसंगत संरचना सामाजिक सृष्टि होती है, व्यक्तिगत नहीं-

- निर्मला जैन

स्त्री और उसका बकरा

छत्तीसगढ़ के एक गांव में भागवत कथा चल रहा था। शाम होते ही बच्चों, बूढ़ों, स्त्री-पुरूषों का झुंड स्वामी जी के पास जमा हो जाता। मंदिर में हवन-पूजन होता। इसके बाद कथा वाचक कथा सुनाते। धीरे-सुनते और प्रतिदिन अपने भाग्य को सराहते कि उन्हें ऐसे महापुरूष के दर्शन हो रहे थे। प्रवचन के बाद स्वामी जी को षष्टांग दंडवत करते लोग। उन्हें चढ़ावा चढ़ाने की तो होड़ लग जाती। प्रवचन दस दिनों तक चला।

दस दिनों तक प्रवचन सुनने एक स्त्री भी आती रही। दस दिनों तक स्वामी जी का प्रवचन चलता रहा। वह दस दिनों तक स्वामी जी की बातें सुनती और आंसू बहाती रही। लेकिन चढ़ावा उसने किसी भी दिन नहीं चढ़ाया। उसके रोने से स्वामी जी का ध्यान बरबस उसकी तरफ चला जाता था। वे सोचते थे कि यह बहुत दुखियारी है। गरीब है इसलिए चढ़ावा भी नहीं चढ़ाती है। शायद अंतिम दिन दक्षिणा दे।

अंतिम दिन प्रवचन में भीड़ लग गई। पूरे उत्साह से घंटियों के बीच प्रवचन समाप्त हुआ। चढ़ावे का तो पहाड़ बन गया। सभी दक्षिणा स्वामी के चरणों में चढ़ाते षष्टांग प्रणाम करते और आशीर्वाद पाकर चलते गए। परंतु वह स्त्री उस दिन भी बैठकर रोती रही। जब सब लोग चले गए पर स्त्री बैठी रही तो स्वामी ने उसे अपने निकट बुलाया। स्वामी जी ने बड़े दुलार से उसके सिर पर हाथ रखा और पूछा- ''क्यों रोती हो, क्या तुम खाली हाथ हो इसलिए रो रही हो?'' उसने ''ना'' में लिए हिलाया तब बता दो क्यों इस तरह आंसु बहा रही हो? स्त्री बोली- ''मेरे पास एक बकरा था, वह खो गया, स्वामी जी ने मन में सोचा'' यह बकरा भेंट चढ़ाने वाली थी शायद, अब खो गया तो दुःख से रो रही है। उन्होंने कहा-कोई बात नहीं, अगले वर्ष जब फिर से 'कथा' होगा तो उससे दुगुना बकरा चढ़ा देना। यह सुनते ही स्त्री जोर से रो पड़ी और बोली ''असल में आप को देख-देख कर मैं रो रही थी। असल में जैसी आपकी दाढ़ी है, मेरे बकरे की भी ठीक वैसी ही दाढ़ी थी। आप की दाढ़ी देख-देख कर मुझे अपने उस बकरे की याद आ रही थी। मैं तो अपने बकरे को याद कर-करके रो रही थी।

कथावाचक इस उत्तर को सुनकर भौचक रह गए। ■

संघर्ष के लिए बढ़े कदम

शशि बारला

"यह आलेख वर्ष 2011 में लिखा गया था जो कि उस समय झारखंड का एक ज्वलंत मुद्दा था। यह मुद्दा वर्ष 2025 में भी उतना ही प्रासंगिक है। आज भी सैंकड़ों महिलायें डायन के नाम पर प्रताड़ित हो रही हैं। कहीं-कहीं तो उनकी हत्या भी हो रही है। इस आलेख को फिर से प्रकाशित करने की जरूरत इसलिए आयी क्योंकि इस तरह के कुप्रथाओं का विरोध जरूरी है। महिलायें यदि साहस से अपने ऊपर हो रहे इस अन्याय का प्रतिकार करें तो स्थितियां बदल सकती है। वर्ष 2011 में यदि कुढ़ानी देवी कर सकती हैं तो वर्ष 2025 में तो महिलायें और भी सशक्त हुई हैं।"

समय और काल धीरे-धीरे बदलते जा रहे हैं। इस बदलते हुए परिस्थिति के अनुसार महिलाएँ भी आज अपने आप को बदल रही हैं। कृषि से लेकर दफ्तर तक महिलाओं का कर्मक्षेत्र सशक्त है। आज की नारी नौकरी से लेकर चूल्हे-चौके तक में आगे हैं। महिला शक्ति किसी संरक्षण का मोहताज नहीं बल्कि उसे सामने लानेवाली मानसिकता की जरूरत है। एक महिला जो माँ है, बेटी है, पत्नी है वह अशक्त कहाँ है। अशक्त तो समाज की मानसिकता है जो भीम के हाथों में गदा देती है पर उसकी शक्ति को रचनात्मकता में नहीं लगाती। ऐसी ही एक सशक्त महिला है जो अपने ही लोगों द्वारा डायन कहकर प्रताड़ित किए जाने के विरूद्ध खुलकर आगे आई है और डटकर उसका सामना किया है।

राँची से करीब 60 कि।मी। की दूरी पर है मुरी रेलवे स्टेशन का एक छोटा सा गाँव सिंगपुर कांटाडीह। इस गाँव में मुंडा महतो इत्यादि जातियाँ, ज्यादातर रहते हैं। सभी एक दूसरे के पर्व-त्योहारों को मिलकर मनाते हैं। इसी गाँव की रहनेवाली है कुढ़ानी देवी। उम्र करीब 65 वर्ष। परिवार में पति श्री द्रोण महतो का स्वर्गवास हो चुका है। उनके तीन पुत्र और एक बेटी है। इस महिला के दोनों बड़े बेटे और बेटी गाँव से बाहर रहते हैं। केवल छोटा बेटा गाँव में माँ के साथ रहता है। उसके अपने गाय-बैल हैं। छोटा बेटा डेयरी चलाता है। प्रतिदिन शाम सात बजे तक वह मुरी और आस-पास के इलाकों में दूध बांटने के लिए चला जाता है। इस परिवार की आर्थिक स्थिति गाँव के अन्य परिवारों की तुलना में काफी अच्छी है। दोनों बड़े बेटे भी शहरों में रहकर अच्छी नौकरी कर रहे हैं। आमदनी अच्छी या अधिक होने के बावजूद इन लोगों के रहन-सहन के स्तर पर कोई अंतर नहीं आया है। वे गाँव के सभी लोगों से मिल जुलकर ही रहते हैं। इसी परिवार के घर से सटे इनके चचेरे देवर का घर है। घर के मुखिया का नाम राजेन्द्र महतो है। राजेन्द्र महतो के परिवार में पत्नी और एक बेटा और बेटी हैं। राजेन्द्र महतो के अन्य छोटे भाईयों का परिवार भी घर पर रहता है। उन्हीं भाईयों में से एक भाई की मृत्यु टी।वी। की बीमारी से गई। चूंकि उसका मर्ज बहुत बढ़ गया था और सही समय पर उसका इलाज नहीं हो पाया था। इसी बात को लेकर राजेन्द्र महतो एवं उसके परिवार के लोगों द्वारा कुढ़ानी देवी को डायन कहकर गाली-गलौज किया जाता है।

इसी गाँव की एक मुंडा महिला आद्री देवी है जिसका पति रेलवे में काम करता है। उसके परिवार में बेटे-बेटी, पति सभी हैं। इसी मुंडा महिला द्वारा गाँव में सोखता बुलाया गया ताकि डायन को चिन्हित किया जा सके। 'सोखता' ने आकर कुढ़ानी देवी का नाम चिन्हित कर दिया। उसका कहना था कि कुढ़ानी देवी ही जादू-टोना कर उस परिवार के लोगों को मार रही है। इतना सुनने के बाद राजेन्द्र महतो के परिवार के लोग कुढ़ानी देवी को बात-बात पर डायन कहकर लगातार प्रताड़ित करने लगे। कुढ़ानी देवी स्वयं दिल की मरीज है। उसे प्रायः इलाज के लिए राँची आना पड़ता

जुझारू कुढ़ानी देवी घेरे में

है। बात काफी बढ़ जाने पर मुरी थाना में कुढ़ानी देवी अपने छोटे बेटे के साथ राजेन्द्र महतो के खिलाफ प्राथमिकी दर्ज कराने गईं लेकिन थाना प्रभारी प्राथमिकी दर्ज करने से इंकार कर दिया। कारण, राजेन्द्र महतो एक राजनीतिक दल से सांठ-गांठ रखने वाला है। जिससे पुलिस भी उसपर उचित कारवाई करने से अपने को रोक रही है। पुलिस का कहना है कि गाँव में पंचायत बुलाकर आपस में सुलह कर ली जाए।

सुलह की बात पर कुढ़ानी देवी का कहना है कि यदि पंचायत के सामने राजेन्द्र महतो लिखित माफीनामा माँगे तथा यदि आरोपी भविष्य में इस तरह की घटना की पुनरावृत्ति न करने का लिखित आश्वासन दे तो मैं इसके लिए तैयार हूँ।

नेशनल एलायंस ऑफ विमेन तथा महिला आयोग के पास भी कुढ़ानी देवी ने आवेदन दिया। जिसके आलोक में नावो की टीम द्वारा गाँव का दौरा किया गया। इस दौरे में गाँव के विभिन्न परिवारों से मिला गया। जिसमें यह निष्कर्ष निकला कि कुढ़ानी देवी के परिवार के पास काफी जमीन-जायदाद है। बाल-बच्चे पढ़े-लिखे एवं अच्छे कमानेवाले हैं। जो कि गाँव के किसी परिवार के लिए औसतन बहुत ज्यादा है। उस गाँव में अधिसंख्य लोग पढ़े-लिखे नहीं हैं। जो थोड़ा बहुत पढ़े हुए हैं वे औसत दर्जे की नौकरी करते हैं। तथा अपने-आप को इस तरह के झगड़ा-झंझट में फंसाना नहीं चाहते। उसपर कुढ़ानी देवी अपने सिर्फ एक ही बेटे के साथ गाँव में रहती है। जबकि दोनों बड़े बेटे शहर में रहते हैं और सिर्फ काम पड़ने पर ही गाँव आया करते हैं। अतः अकेली महिला को परेशान करना कोई कठिन काम नहीं है। उसपर वह बूढ़ी और बीमार रहती है।

जनवरी 2011 में कांटाडीह गाँव के गुलापी देवी (वार्ड सदस्य) के प्रांगण में एक बैठक हुई जिसमें धनेश्वर मांझी, (नया मुखिया) पंचायत समिति के सदस्य, गाँव के गणमान्य व्यक्तियों एवं नावो के सदस्यों के समक्ष राजेन्द्र महतो एवं उसके परिवार के अन्य सदस्यों ने कुढ़ानी देवी से भविष्य में डायन नहीं कहने के लिए लिखित माफी माँगी, यह सिर्फ एक कुढ़ानी देवी की बात नहीं, झारखंड में इस तरह की अनेकों कुढ़ानी देवियाँ मिलेंगी जिनके साथ ऐसी घटनाएं आए दिन होती रहती हैं। कुछ को अखबारों में जगह मिल पाती है कुछ यूँ ही लोगों की दरिंदगी का शिकार हो जाया करते हैं। कुढ़ानी देवी अकेली होने के बावजूद हिम्मत नहीं हारी और अपने डायन होने के आरोप को गलत करार करवाया। वह अपने लोगों (रिश्तेदारों) से, समाज से इसके लिए लड़ी और उनकी जीत हुई। हालाँकि संघर्ष करते हुए मुकाम तक पहुँचने या जीत हासिल करनेवाला एक नारी वर्ग ऐसा है जिसने कर्मठता एवं साहस दिखलाया है। अपनी पैठ बनायी है। पर ऐसों की संख्या मुट्ठी भर है। कदम तो सभी को बढ़ाने होंगे।

डायन जैसे अंधविश्वास के खिलाफ बच्चों में जागरूकता पैदा करना तथा इससे उत्पन्न सामाजिक चुनौतियों का सामना

करने के लिए मानसिक तथा बौद्धिक रूप से तैयार करने की जरूरत है। समाज में फैली तमाम कुरीतियों एवं अंधविश्वास को दूर कर ने के लिए शिक्षित एवं जागरूक लोगों को आगे आना होगा। झारखंड भारत का 28वां प्रदेश है। 2001 की जनगणना के अनुसार यहाँ महिलाओं की शिक्षा का प्रतिशत 39.38 है। झारखंडी महिलाओं के शत्रु उनके घरों में ही है। अंधविश्वास के अंधेरे में महिलाओं को डायन बताकर मार डालने की घटनाएँ हतप्रभ कर देती हैं। ऐसी कुप्रथा का सशक्त सामाजिक प्रतिरोध होना चाहिए। सामाजिक स्वीकृति कानून को नकारा बना देती है और अंधविश्वास को शोषण का औजार।

सचमुच हमें महिला शक्ति पर चिंतन करना है तो महिला के प्रति समाज की कमजोर सोच को बदलना होगा। समाज की यह सोच बदलें कि महिला को अपने बलबूते रहने का हक नहीं। 'द हिंदुस्तान' में छपी खबर के अनुसार 1991-2008 तक 984 महिलाओं की हत्या डायन कहकर प्रताड़ित किया गया। नीचे झारखंड के विभिन्न

जिलों के महिला डायन हत्या की सूची है।

जिला	डायन हत्या
राँची	242
प. सिंहभूम	178
पूर्वी सिंहभूम	60
सरायकेला, खरसावां	34
लोहरदगा	127
गुमला	100
सिमडेगा	39
पलामू	60
गढ़वा	18
चतरा	10
हजारीबाग	15
कोडरमा	16
गिरिडीह	15
धनबाद	6
बोकारो	12
देवघर	16
दुमका	11
साहेबगंज	14
गोड्डा	11

यह सूची यह दर्शाता है कि झारखंड के लोग कितने असंवेदनशील हैं और अपने ही हाथों से स्वजनों की हत्या तक करने से भी नहीं चूकते। डायन हत्या प्रतिषेध अधिनियम 2001 के अंतर्गत कानून की धारा 3-4 के तहत वैसे लोगों को दंड देने का प्रावधान है जो किसी भी महिला को डायन कहकर प्रताड़ित करते हैं। पर अधिसंख्य प्रशासनिक अधिकारियों को भी इस कानून के संबंध में गहरी और विस्तृत जानकारी नहीं है। फलतः यह कुप्रथा कम होने के बजाय दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है। लोगों का कानून के प्रति कोई डर भी नहीं रह गया है। कुढ़ानी देवी ने साहस दिखलाया और अपने दुश्मनों की पोल खोल दी। लेकिन कुढ़ानी देवी जैसा साहस कितनों के पास रहता है? कभी-कभी तो बचाव का अवसर भी नहीं मिलता। ■

ताकतवरों ने रूढ़ियां तोड़ी

आधी दुनिया डेस्क

कर्नाटक की चन्द्रकला राव की उम्र 47 वर्ष है। वह पेशे से नर्स है। उसने इस उम्र में जीवन साथी ढूंढ़ी। और वह भी स्वयंवर के माध्यम से। यह सही है कि एक उम्र के बाद साथी की जरूरत होती है जिसे अपना कहा जा सके। सुख-दुख बांटा जा सके। चन्द्रकला राव ने इस जरूरत की पूर्ति के लिए बड़े धैर्य से काम किया। उन्होंने विज्ञापन निकाला। विज्ञापन का उत्तर 15 लोगों ने दिया। उत्तरों में से छह आवेदन स्वीकृत किए गए। परंतु विवाह तो एक से होता था, सो छह में से एक भाग्यशाली थे राजेन्द्र भट्ट, जिन्हें चन्द्रकला ने जीवन-साथी स्वीकार किया।

राजेन्द्र भट्ट राजकोट निवासी हैं। वे तलाकशुदा हैं और नेशनल इन्श्योरेंस कंपनी में स्टेनो हैं।

भारतीय समाज में रूढ़िवादिता है। कई लोगों को 47 वर्षीय चन्द्रकला के विवाह की बात जानकर हंसी आई होगी, क्योंकि जिस देश में बाल-विवाह जैसी कुरीतियां हैं, वहां 47 वर्ष की महिला विवाह करती है तो पुरुष सत्ता को जोरदार चोट लगती है। जिन्हें चोट लगती है वे वास्तव में मानसिक रूप से अक्षम हैं। विचार करने के उनके रास्ते अवरूद्ध हैं।

भारत में विवाह को सात जन्मों का बंधन कह कर युवा विधवा स्त्रियों के जीवन को नरक बना दिया गया है। युवा विधवाएं परिवार के अंदर और परिवार के बाहर, दोनों जगह भयंकर रूप से शोषित और प्रताड़ित हुई हैं। वृद्ध विधवाएं अमीर हों या गरीब, घर से बाहर धकेल दी जाती हैं। बनारस, हरिद्वार आदि जगहों में ऐसी विधवाओं का जीवन सहज ही देखा जा सकता है।

भारतीय समाज में विवाह सात जन्मों के बंधन के अतिरिक्त दैहिक जरूरत की पूर्ति के रूप में भी देखा जाता है। 16-17 वर्ष के लड़के और 13-14 वर्ष की लड़की का विवाह इसलिए कर दिया जाता है कि इस उम्र में बालिकाओं और बालकों के शरीर में बदलाव आता है। युवावस्था में इनका ध्यान दैहिक परिवर्तन की ओर स्वतः जाता है। उत्सुकतावश उनके कदम आगे बढ़ जाते हैं जिसे समाज गलत कहता है, अपराध मानता है।

बालिकाओं के लिए उत्सुक होना भी वर्जित है। इसलिए भारत में बालिकाओं की दुनिया बहुत ही संकुचित होता है। सेक्स पर बात करना तो पाप है, धर्म का पतन है। अतः बालिकाएं अपने सेक्स संबंधी जीवन के लिए पूरी तरह पति पर निर्भर होती है। बात वहां बिगड़ती है जहां विवाह के दो से चार वर्षों के अंतराल में संतान पैदा न हो। ऐसी स्थिति में बालिका ही दोषी होती हैं। उसे अपशकुन, भाग्य की मारी समझा जाता है। जबकि दैहिक अपूर्णता पति में भी हो सकती है।

उम्र का हिसाब हमारे यहां विचित्र है। युवकों का 20-25 वर्ष में और बालिकाओं का विवाह 16-21 वर्ष में हो जाना चाहिए। अभी हाल में यह माना जाता रहा है कि मुस्लिम युवती 16 वर्ष की उम्र में बालिग मानी जाए और उसके विवाह को वैध माना जाए। ये उनका जाती मामला हैं - ऐसा कहना शाहबानो केस से लेकर अबतक है। हम इतना जरूर कह सकते हैं कि अखंड भारत वास्तव में अंदर से खंड-खंड है। एक बात अखंड है कि जाति, धर्म, समाज की आर्थिक स्थिति तब महिलाओं पर अपना कानून थोपता था।

झारखंड में जब महिला आंदोलन शीर्ष पर था तब महिलाओं ने कॉमन लॉ की मांग की थी। इससे पूरे देश की महिलाओं में एकजुटता बनती। क्योंकि धर्म, जाति, क्षेत्र अलग-अलग होने के बावजूद महिलाओं का शोषण और उत्पीड़न एक जैसा है। जैसे मारना, पीटना, जलाना, मार डालना, आर्थिक मांग पूरी न होने के एवज में हत्या, अंगभंग करना शक करना आदि। अब जब थोड़ा जागरूक हो गई हैं तो परित्यक्ता होने पर भरण-पोषण की मांग, असहज उत्पीड़न और हत्या की आशंका पर तलाक की

मांग आदि करने लगी हैं।

स्वस्थ समाज में दाम्पत्य जीवन का स्वरूप कैसा हो इसे चन्द्रकला राव ने दिखाया है। पूर्ण परिपक्व उम्र, आपसी सहमति और आर्थिक रूप से कोई किसी पर बोझ नहीं। इनका विवाह बिना अगर-मगर के, सहमति बनाने की लंबी प्रक्रिया के बाद हुई है। इसे हम आदर्श विवाह कह सकते हैं। रही संतानोत्पत्ति की बात। इस देश में इतनी मातृ-पितृहीन संतान हैं यदि आपस में सहमति बने तो उनमें से किसी को भी माता-पिता का सुख दिया जा सकता है। जब विवाह का निर्णय ले सकते हैं तो संतान का क्यों नहीं? यह उनका निजी मामला होगा।

चन्द्रकला राव ने एक स्वस्थ परंपरा का आरंभ किया है। इस पर अभिभावकों और युवा पीढ़ी को मनन करने की जरूरत है। आज देश में 'रिश्तों' का कोई स्थान नहीं रह गया है। दिल्ली, उत्तर प्रदेश आदि जगहों में खाप पंचायत है। पूरे देश में 'ऑनर किलिंग' प्रेत की तरह आतंक मचा रखा है। ऐसे में चन्द्रकला राव के कदम टॉर्च की तरह युवाओं और अभिभावकों के चिंता-मार्ग को दिशा निर्देश करेगा।

बड़ा बनाने की अपेक्षा में अभिभावक बच्चों को अकेलापन दे रहे हैं। जबकि मित्र का होना मानवीय आवश्यकता है। अकेलेपन में दिशाहीन बच्चे भूल पर भूल करते जा रहे हैं। चन्द्रकला ने स्वावलंबन, मित्रता और अपनेपन का आदर्श उपस्थित किया है जो सराहनीय है। उन्होंने तथाकथित समाज की सारी रूढ़ियां तोड़ दी है।

एक खास उम्र (40 वर्ष के बाद) जीवनसाथी की आवश्यकता बहुत महसूस होती है। अपने सुख-दुख बांटने के लिए। आपस में विचार-विमर्श करते के लिए। जीवन में प्रायः हर व्यक्ति दूसरे को अपने दृष्टिकोण से देखता है। उसके एक पहलू को देखकर एक निर्णय पर पहुंच जाता है। और उसी निर्णय को पूरी तरह से सही सिद्ध करने की कोशिश में लगा रहता है।

औरतों के आचरण के लिए महिलाओं को कहा जाता है कि तुम एक स्वतंत्र नागरिक हो। पर जब वह समाज के बनाये लीक से हटकर कुछ करना चाहती है तो उसे कहा जाता है कि अपने लिए बने घेरे को तोड़ने की कोशिश मत करो। खेल मत खेलो, पुरुषों के अहं को उकसाओगी तो अंजाम भारी होगा। क्योंकि ये समाज पुरुषों का है। समाज को मत ललकारो, फिर महिला की आजादी का क्या मतलब हुआ ? जब वह स्वयं निर्णय न ले सके। ■

"औरतों के आचरण के लिए महिलाओं को कहा जाता है कि तुम एक स्वतंत्र नागरिक हो। पर जब वह समाज के बनाये लीक से हटकर कुछ करना चाहती है तो उसे कहा जाता है कि अपने लिए बने घेरे को तोड़ने की कोशिश मत करो। खेल मत खेलो, पुरुषों के अहं को उकसाओगी तो अंजाम भारी होगा। क्योंकि ये समाज पुरुषों का है। समाज को मत ललकारो, फिर महिला की आजादी का क्या मतलब हुआ ? जब वह स्वयं निर्णय न ले सके।"

"व्यापक समाज में महिला विरोधी सांस्कृतिक मूल्यों, प्रथाओं और चलनों पर चौकसी और संघर्षों को फैलाना होगा। ऐसा करना मुश्किल है, परंतु हकीकत में उम्मीद सिर्फ ईमानदार नागरिकों और संगठित महिलाओं/लोगों से लगाई जा सकती है कि वे इस बुराई के विरूद्ध लड़ने की पहल और प्रयास करें।"

आत्मनिर्णय के क्षण

शशि बारला

डॉ. मेबल कटारिया हजारीबाग के चरही कस्बे में अपना क्लिनिक चलाती है। उनके परिवार में फिलहाल वह स्वयं और दो पुत्रियां हैं। छोटी लड़की उनकी पोष्य पुत्री हैं। इस बच्ची को दिसम्बर के महीने में क्रिसमस की रात उसकी मां ने जन्म देकर डा. के घर के निकट पेड़ के नीचे छोड़ दिया था। डा. मेबल ने उसे क्रिसमस का उपहार कह कर स्वीकार कर लिया था।

बच्ची नवजात थी। जन्म के तुरंत बाद उसकी सफाई होनी थी। पर देर हो जाने के कारण उस शिशु की एक आंख जाती रही। डाक्टर अपने यहां इस कमजोर शिशु की उचित देखरेख करने में असमर्थ थी। उसने सिस्टरों के अनाथालय में बच्ची को दे दिया। वहां वह तीन वर्ष की उम्र तक रहीं। वहीं उसने स्कूल जाना आरंभ किया। वहां वह हिन्दी माध्यम से पढ़ रही थी। फिर डाक्टर मेबल उसे अपने पास ले आई। अभी वह पांच वर्ष पूरे कर चुकी है और इंग्लिश माध्यम से पढ़ाई कर रही है।

झारखंड के गुमला जिले के चैनपुर प्रखंड में डा. मेबल का गांव है। उसके पिता शिक्षक थे। ग्रामीण परिवेश मिलने के बावजूद वह डाक्टर बनी। डाक्टरी की पढ़ाई के दौरान ही उनकी मित्रता रवि कटारिया से हुई। मेबल बताती हैं- रवि कटारिया का पोशाक अन्य डाक्टरों से अलग था। वे कुरता-पाजामा और चप्पल पहनते थे। हां, चेन-स्मोकर भी थे. याने लगातार सिगरेट पीने वाले मेधावी छात्र।

मेबल और रवि में मित्रता थी। पर दोनों के विवाह में सामाजिक सोच आड़े आ रहा था। मेबल ईसाई परिवार की होने के कारण ईसाई विधि-विधान से विवाह करना चाहती थी। वह सामान्य युवतियों की तरह विवाह में प्रीस्ट का आशीर्वाद और परिवार को प्रसन्न रखना चाहती थी। मेधावी डाक्टर रवि की सोच क्रान्तिकारी थी वे कहते थे- 'कौन फादर मुझे आशीष देगा?'

डाक्टर बनने के बाद मेबल डाल्टनगंज में नियुक्त थी। यहां उनके पिता ने बेटी की शादी तय की। इससे पहले रवि और मेबल ने आपसी विमर्श के बाद तय कर लिया कि मेबल अपने सामाजिक परिवेश में विवाह कर ले। मेबल के पिता ने लड़का पसंद किया। मेबल ने भी स्वीकृति दे दी। लेकिन आगे खोजबीन हुई तो ''लड़का बेहद शराबी निकला। लड़का इतना शराबी था कि पीकर जहां-तहां गिरा पड़ा रहता था-'' ऐसा मेबल कहती हैं।

दिन तय हुआ। उस दिन विवाह संबंध को पुख्ता करना था। मेबल को तय करना था शराबी पति जो उसके धर्म और जाति का है से समझौता कर ले, या विद्रोह करे। उसने विवाह करके दुःखी जीवन जीने से इन्कार कर दिया। वह शाम को भाग कर रवि के पास चली गई। दोनों वहां से चरही चले आए और कोर्ट में शादी कर ली। स्वाभाविक था पैत्रिक परिवार नाराज हुआ और संबंध तोड़ दिया।

विवाह के बाद उनकी बेटी पैदा हुई। अभी वह सोलह वर्ष की युवती है। लेकिन रवि आज पत्नी और बेटी के साथ नहीं हैं। उनकी मृत्यु अचानक हृदयगति रूकने से हो गई। इसके बाद भी डा. मेबल हारी नहीं हैं। वे अकेली क्लिनिक चला रही हैं। उनके पास उन्हीं के द्वारा प्रशिक्षित नर्स और अन्य तकनीशियन हैं। अभी उनके पिता भी बेटी के जीवन से संतुष्ट हैं। मेबल अपने निर्णय के पल को महत्वपूर्ण मानती हैं। वे कहती हैं- 'मैंने निर्णय लिया और आज मैं हूं। यदि परिवार के निर्णय के सामने समर्पण कर देती, तो पता नहीं मेरा क्या होता।' यह सही है। लेकिन आज मेबल डाक्टर के रूप में तो है ही अत्यन्त खुशमिजाज डाक्टरों में से भी एक है। ■

आत्मनिर्णय के क्षण

आधी दुनिया डेस्क

वरदानी तिर्की मनसिद्ध तिर्की की पुत्री है। इन्हें छह वर्ष की उम्र में छात्रवास में डाल दिया गया। यह सन् 1947 ई. की बात है। उनके पिता कोचेडेगा, जिला सिमडेगा, (तब रांची) में प्रचारक थे। कोचेडेगा से सिमडेगा पैदल चलकर आना पड़ता था। सिमडेगा से रांची के लिए भारत मोटर कंपनी की बसें प्रातः क्रमशः 5 बजे और 6 बजे छूटती थीं। ये बसें शाम को साढ़े चार और साढ़े पांच बजे रांची पहुंचती थीं। एक डाक गाड़ी और आर. साहु बस चलती थी। इसके छूटने और पहुंचने का समय बिल्कुल निश्चित नहीं था। बरदानी और उसके जैसी अन्य बच्चियों को पिता श्री मनसिद्ध तिर्की 3 बजे भोर बैलगाड़ी में बैठा कर सिमडेगा पहुंचाते और वहां बस से बैठाकर खूंटी रवाना कर देते थे।

खूंटी के एस.डी.ए. मिशन स्कूल में सातवीं तक पढ़ाई करने के बाद आगे पढ़ाई के लिए बरदानी जी पूणे चली गईं। गांव से स्कूल तक की लंबी यात्र ने उन्हें अन्तर्दृष्टि दी। उन्होंने अपनी तीन बेटियों और एक बेटे को ऊंची शिक्षा दिलायी अपने बच्चों को ऊंची शिक्षा दिलाना बड़ी बात नहीं है। बड़ी बात है कि श्रीमती वरदानी तिर्की ने गांव के बच्चों को अपने पास रखकर पढ़ाना शुरू किया। जिनमें कुछ विशेष कर पाए उनके नाम हैं-

1. हुकुम प्रकाश पिता दशरथ प्रकाश (खूंटी) - बरियातु मिशन स्कूल में 8वीं कक्षा तक पढ़ा इसके बाद कमड़े आश्रम चला गया। वहां से उसने मैट्रिक पास की और प्राइवेट से +2 पास किया आगे की पढ़ाई स्वयं उसने की, राह दिखाने का काम श्रीमती वरदानी ने किया। +2 करने के बाद एक वर्ष तक कृषि प्रशिक्षण लिया।
2. रेचेल - ये प्रकाश की बहन है, जिसे बहुत मेहनत करके +2 तक पढ़ाया और एस.डी.ए. मिशन अस्पताल से 'ए' ग्रेड की नर्सिंग टेढुनिंग करायीतब तक का पूरा खर्च वहन किया।
3. पुष्पा - हटिया में पिता रिक्शा चालक है। मां बच्चों को छोड़ चली गई। इसको मैट्रिक तक पढ़ाने के बाद +2 के लिए बीरमित्रपुर भेजा है इसके बाद वह भी नर्सिंग टेढुनिंग में जाएगी प्रधानाध्यापक वरदानी से सहयोग करके आधी फीस याने 70/- (सत्तर) रु. लेते रहे।
4. सुनीता - पुष्पा की बड़ी बहन है। इसे मैट्रिक तक पढ़ाकर ए.एन.एम. की ट्रेनिंग पूणे में दिलाया। 24 दिसंबर 2005 को उसका विवाह कर दिया गया।
5. मंजू जिंगी लोहरदगा की लड़की है। इसने मैट्रिक तक पढ़ाई की लेकिन पास नहीं कर सकी। उसे पढ़ने की इच्छा ही नहीं थी। वह गांव वापस चली गई। गांव में लड़कियों को सफाई एवं गृह-सज्जा के बारे बताती है। वह बताती है कि क्यों घर को सजा कर रखना है।
6. रोहित (बरियातु) 7-8 वर्ष का बच्चा है। अभी उसका पिता हत्या का अभियुक्त है और जेल में है। मां नर्स है। बच्चे की ठीक देखभाल नहीं हो रही थी तो उसे श्रीमती मिंज अपने यहां रखकर पढ़ा रही हैं। इस बच्चे के साथ अभी और दो लड़के उसी उम्र के हैं। ये भी स्कूल में पढ़ते हैं। अंग्रेजी समझते और बोलते हैं।

इसके अतिरिक्त कई अन्य बच्चों को इन्होंने पढ़ाया लेकिन वे मैट्रिक पास नहीं कर सके। ये साइकिल रिपेयरिंग, फिटर आदि का प्रशिक्षण लेकर अपना-अपना काम कर रहे हैं। प्रकाश अच्छा किसान बना है। ये सारे बच्चे इनसे हमेशा मिलने आते हैं, इन्हें घर छोड़कर बाहर कमाने जाने की जरूरत नहीं पड़ी। महत्वपूर्ण बात यह है कि बच्चों को मिशन के खर्चीले स्कूल में भेजती हैं और सारा खर्च वहन करती हैं। इनके पति इनका पूरा सहयोग करते हैं। एक बेटा पूणे में प्रोफेसर है, बेटी डॉक्टर और एक बेटी प्रिंसिपल है। एक बेटी विदेश में अच्छे पद पर है। ये सारे बच्चे मिलकर अपनी मां के भले कार्य में सहयोग करते हैं। ■

हौसले की जीत

रोज केरकेट्टा

रांची जिला के मांडर प्रखंड में हेसमी पंचायत है। हेसमी पंचायत सीमा पर है एक छोटा नाला। यह नाला हेसमी गांव को सीमा को बाँधती है जिस पर ढेढ़ा पुल है। नाला के पार चान्हो प्रखंड है।

नाला में सालों भर पानी रहता है। इस नाले का उद्‌गम गड़मी गाँव से है। उद्‌गम स्थल पर बबूल के पेड़ हैं। कभी उनकी छाया में मवेशियों का गोठ लगता था। गरमी में हेसमी और विशेषकर गड़मी गांव में पानी की किल्लत बहुत थी। पर दसवीं पास बेरोनिका कुशल नेतृत्व वाली आंगनबाड़ी सेविका थी। जुनास लकड़ा वन एवं कृषि कार्य का एक्सपर्ट था। उन्होंने मिल कर नाले में चैकडेम बांधना तय किया।

प्रखंड विकास पदाधिकारी शत्रुध्न पाठक थे। उन्हें महिला समूह ने चैकडैम के लिए आवेदन दिया। परंतु स्कीम उनको नहीं मिली। तब समूह सीधे डी.डी.सी. से मिला। उपविकास आयुक्त एल. खियांग्ते ने उनकी बात सुनी। आवश्यक औपचारिकता के लिए बी.डी.ओ. को उचित निर्देश दिया और कहा कि बांध बांधने का काम महिलाएं ही करेंगी। कागजी कार्रवाई आप दुरुस्त कर लें।

बी. डी. ओ. ने कार्रवाई शुरु की। नाले के पास ग्रामीणों के साथ बैठक हुई। बी. डी. ओ. ने कहा कि महिलाएं ही बांध निर्माण का काम करेंगी। महिलाओं को संबोधित करते हुए उन्होंने कहा - ''आप सब आज की बैठक में उपस्थित हैं। मैंने आप सबके सामने बैठक में कहा है कि महिलाएं ही चैकडेम निमार्ण का कार्य करेंगी। इसलिए प्रमाण के रूप में इस कागज पर हस्ताक्षर कर दें'' कहते हुए उन्होंने एक सादा कागज उनकी ओर बढ़ा दिया। महिलाओं ने चटपट हस्ताक्षर कर कागज बी. डी. ओ. को वापस कर दिया। बैठक समाप्त हो गई। महिलाएं बालू, पत्थर, कुदाल, गैंता, कुल्हाड़ी आदि जुगाड़ने की योजना बनाने लगीं। आपस में सलाह करते हुए घरों को लौट गईं। यह रविवार का दिन था।

पांच दिन बीत गए। छठे दिन, शनिवार को बलकू, जीतू और भादे बैल - बकरियों को लेकर नाले की ओर गए। उन्होंने देखा, नाला पार चोरेया के पांच लोग खुदाई कर रहे हैं। उन्होंने खुदाई करने वालों से पूछा - क्या कर रहें हैं भाई ? उत्तर मिला - वही चोरेया का सुरेश साव बांध बांध रहा है।''

''पूजा-पाठ किए बिना काम शुरु हो गया?''

''वही जानेगा। हम लोगों को सिर्फ खोदने बोला है। अभी तक आया भी नहीं।''

भादे बोला - ''हां आ ही रहा होगा। शुरु के समय थोड़ी न समय पर काम होता है।''

जीतू - ''परसाद का बुन्दिया खरीदने गया होगा'' - बोला और सब हंसने लगे। बलकू खैनी रगड़ रहा था। उसने खैनी बांटा और सब खैनी खाने लगे। बलकू, जीतू और भादे ने मवेशियों को पानी पिलाया और घर लौट गए।

घर लौट कर वे चुप नहीं रहे। आंगनबाड़ी जाकर बेरो से कहा - ''जाओ, तुम्हारा चैक डैम तो चोरेया का सुरेश साव बांध रहा है। कुली नींव खोद रहे हैं।''

सुनते ही बेरो ने बच्चों को सहायिका के हवाले किया। गांव की महिलाओं को साथ लेकर भागी नाले की ओर। सुरेश साव महिलाओं को आती देख भाग गया। कुली हक्का-बक्का। महिलाओं ने उनके तीन गैंता, तीन कुदाल और दो छेनी लूट लिए। कुलियों ने कहा - ''हम क्या करें। हमें तो उसने काम पर लगाया था।'' फिर वे घर वापस हो लिए। उनका चेहरा बोल रहा था - ''पता नहीं, आज की मजदूरी मिले, न मिले।''

महिलाओं को इस अनहोनी की आशंका नहीं थी। काम का सारा दारोमदार बेरो पर था। रविवार को उसने

गांव में बैठक की। पुरुषों ने बेरो पर सारी जिम्मेदारी सौंप दी। उन्होंने एतवारी को अभिकर्ता चुना क्योंकि उसका पति फौजी था। उसकी बेटी इंटर में पढ़ रहीं थी। महिलाओं को भरोसा था कि उनका पैसा नहीं डूबेगा। बैठक में तय हुआ कि आंगनबाड़ी सहायिका जिऊनी को मदद करेगी। कल से आंगनबाड़ी में रीना सहायता करेगी क्योंकि उसकी पढ़ाई छठी तक है। आगे भी बेरो के भागदौड़ के समय रीना ही आंगनबाड़ी में मदद करेगी।

गांव की किसान महिलाएं हांक लगाने की आदी होती हैं। इसलिए उनकी सामान्य ध्वनि भी तीव्र होती है। फुसफुसाना उनके स्वभाव में नहीं है। उन्होंने बैठक में तय किया कि कल वे डी.डी.सी. एल खियांग्ते से मिलकर सारी बातें रखेंगी और वर्क आर्डर अपने नाम करायेंगी। एतवारी, बेरो, सुमति, सारो और ननकी जाएंगी।

दूसरे दिन आठ बजे सुबह मेरे पास वे पहुंच गईं। मुझे उन्होंने सारी बातें बता कर डी.डी.सी. से मिलने का आग्रह किया। हम साढ़े नौ बजे कार्यालय गईं। मैंने उन्हें स्वयं अपनी बातें रखने को कहा। जैसे ही अफसर अपनी कुर्सी पर बैठे। महिलाएं चेंबर में पहुंच गईं। उन्होंने अपनी बात रखी। डी.डी.सी. ने ध्यान से सुना। उन्होंने महिलाओं से कहा कि आइन्दे किसी सादे कागज पर हस्ताक्षर न करें। लिखे हुए कागज पर भी पढ़ने-समझने के बाद हस्ताक्षर करें।

डी.डी.सी. ने अपने पहले के वर्क आर्डर को निरस्त किया। नया वर्क आर्डर एडवांस के साथ जारी किया। यह महिलाओं की पहली जीत थी।

महिलाओं को पौने दो लाख रुपयों का वर्क आर्डर मिला।

जब कार्यस्थल पर देखा तो पाया कि प्रखंड अधिकारी जहां बांध बंधा रहे थे उस स्थान पर ऊपर नाला दो भागों में बंट रहा था। स्पष्ट था कि नीचे बांधने पर पानी नाले के दूसरे भाग से बह जाता। संकरी जगह पर बांधने से खर्च भी कम होता। कुल मिलाकर ठीकेदार की दसों अगुंलियां घी में थीं।

अब महिलाओं का जोश सातवें आसमान पर था। उन्होंने बहुत सावधानी से पत्थर, गिट्टी, बालू, सीमेंट का जुगाड़ किया। मनमाफिक मिस्त्री चुने। स्वयं महिलाओं के बीच में स्पर्द्धा शुरु हो गई कि कौन कितना अधिक अच्छा काम कर सकती है। प्रशासन का निचला तबका महिलाओं से क्षुब्ध था। उसने काम से बेरुखी और असहयोग शुरु किया। ओवरसियर ने न काम देखा न सुझाव दिए। तब महिलाओं को किसी तरह जमशेदपुर के आई.आर.डी. के बारे में पता चला। वहाँ के दो छात्रों कर्मवीर मिंज और अक्षय से परिचय हुआ। उन्होंने न केवल मौखिक परंतु कार्यस्थल पर जाकर भी कुछ सुझाव दिए।

इससे ओवरसियर और नाराज हुआ। उसने फाइनल नापी और भुगतान में महिलाओं को पानी पिला दिया। पचास हजार रुपयों का अंतिम भुगतान रुका रहा।

खेती का समय आ गया। बार-बार प्रखंड भागना, अधिकारियों से गिड़गिड़ाने का वक्त नहीं था। सो उन्होंने मन में संतोष कर लिया कि चलो कम से कम बांध तो बंध गया। अब चैकडेम से गड़मी और उस पार के चोरेया गांव को पानी मिलने लगा।

मांडर प्रखंड के हेसमी पंचायत के गड़मी गांव की यह कहानी 1993-94 की है। चैकडेम का संघर्ष और महिलाओं की मेहनत की जीत का जीता-जागता प्रसारण दूरदर्शन दिल्ली से हुआ। नाम भूल गई पर किसी झिंगन नायक ने महिला फिल्म बनाई थी और हेमामालिनी ने एकरिंग की थी। इसमें बेरोनिका, एतवारी, रीना, सलोमी (बरगड़ी) और बिरतिया (मल्टी) की विशेष भूमिका रही। पंचायत को समेट कर महिलाओं को प्रेरित करने में हेसमी के जुनास लकड़ा और क्लारा कुजूर रीढ़ की हड्डी प्रमाणित हुए।

छह महीने में महिलाओं द्वारा बांधा गया चैकडेम तीस वर्षों के बाद भी मजबूती से खड़ा है। इसकी कहानी महाराष्ट्र के 'पानी पंचायत' नामक संगठन ने भी सुनी और देखने के लिये आए। महिलाओं ने अपनी खुशी उस दिन प्रकट की जब पहली बार चैकडेम में पानी

भरा। वहां कुछ बड़ी मछलियां आ गई। महिलाएं पानी में उतरीं। उनसे मछलियां टकराने लगीं। महिलाएं पानी में ही खुशी से चीखने और नाचने लगीं।

असली संघर्ष की बात करें जब हौसला हारता है

प्रखंड स्तरीय प्रशासन ने जब देखा कि हेसमी पंचायत की महिलाएं संगठित हो गई हैं तो वे चौकन्ने हो गए। उनकी बाहरी आमदनी का रास्ता बंद हो जाएगा। यह तो संक्रामक बीमारी है। एक पंचायत से दूसरे पंचायत, तीसरे, चौथे पंचायत करते-करते प्रखंड के सारे पंचायत संक्रमित हो जाएंगे। महिलाओं के सामने उनकी कीमत कौड़ी भर की रह जाएगी। बहुत माथा-पच्ची के बाद प्रखंड के प्रशासकों ने उसी पंचायत के दलाल को पकड़ा। दलाल ने गांव के युवकों को पकड़ा। ये लड़के कॉलेज और हाईस्कूलों में पढ़ते थे। आदिवासी थे। व्यवहारिक चिंतन से दूर रटंत विद्या के शिकार थे। दलाल पढ़ा-लिखा, आर्थिक रुप से सबल और उच्चवर्णी। युवक परंपरागत रूप से शिक्षक के शिष्य थे। इसलिए दलाल उनके लिए देवदूत थे। दलाल ने युवकों को भड़काया।

दलाल ने कहा - ''तुम्हारी माएं ही ठीकेदारी करेंगी तो तुम क्या करोगे? तुम्हें कहां से काम मिलेगा? अपनी-अपनी मां को समझाओ कि वे तुम्हारे लिए काम बचा कर रखें। दूसरी बात कि तुम्हारी मांओं ने जो पैसा समूह में जमा किया है, उसे मांग लो। वह तुम्हारा पैसा है। फंड में जमा करोगे तो वह एतवारी का हो जाएगा। अरे तुम्हारी मां तुम्हारे लिए रख रही है। तुम वे पैसे मांगो और खाओ-पियो, मौज करो। अभी नहीं तो कब। दांत बेरा (समय) बूट नहीं, बूट बेरा दांत नहीं।

युवकों के लिए यह देववाणी थी। गड़मी गांव के युवकों ने अपनी मांओं को विवश कर दिया। मांयें एतवारी और बेरो से झगड़-झगड़ कर अपने पैसे ले लिए। पैसे ज्यादा नहीं थे। प्रत्येक दिन की मजदूरी में से एक रुपया एक महिला जमा करती थी। तीन महीने में एक महिला का नब्बे रुपया जमा था। एतवारी और बेरो ने क्रोध में आकर सबको पैसे लौटा दिए। समूह टूट गया। प्रखंड के असहयोग से अंतिम भुगतान के लिए बेरो ने दौड़ना छोड़ दिया। वह दुःखी हो गई और एक दिन ब्रेन हेमरेज से मर गई।

माताओं का संतान के प्रति प्रेम आवश्यक है। यह समाज को सही राह में ले जाने के लिए उचित भी है। लेकिन जब महिलाओं का समूह पूरे पंचायत में बैठकर निर्णय लेता है तब युवाओं को जो शिक्षित कहलाते हैं - अपना और समाज के हितों का उचित मूल्यांकन करना भी सिखाना होगा। स्कूली शिक्षा में ऐसे विश्लेषण का सर्वथा अभाव है। महिलाएं मां और बच्चों की प्रथम शिक्षिका होती हैं वे पंचायत अथवा ग्राम सभाओं की सक्रिय सदस्या होती है। वे ग्राम शिक्षा समितियों में हैं। उन्हें ग्राम स्तर पर युवाओं को विशेष रुप से राह दिखाने की जरूरत है। ग्राम से लेकर पंचायत और प्रखंड स्तर तक अगर मिलजुल कर कोशिश करें तो यह असंभव नहीं है।

यह सब पितृसत्ता से उपजा मर्दवादी सोच है जो जगह-जगह स्त्रियों के हौसले को रौंद कर मिट्टी में मिला देता है। प्रशासन ऐसे हौसलों को विकास का मापदंड नहीं मानती। बल्कि ऐसे कार्यों को देखकर भी अनदेखा करती है। तंत्र महिलाओं के हौसलों को बर्दाश्त नहीं करता। ऐसी साहसी महिलाओं को अपने साथ नहीं ले चलता। उल्टे उन्हें पास फटकने से रोकती है। इस पुरुषवादी विचारधारा को महिला-पुरुष दोनों को समझना है। यह ग्राम स्तर और पंचायत स्तर पर ही संभव है। ■

जो लोग चलते नहीं उन्हें अपनी जंजीरों का पता नहीं चलता।

- रोजा लक्जमवर्ग

सामूहिक खेती में हर घर से महिला-पुरुष करते हैं योगदान

सनत कुमार पानी

घाटशिला के डुमरिया प्रखंड के कोलाबाड़िया गांव ने आपसी सहयोग की मिसाल कायम की है। आदिवासी बहुल इस गांव में किसान और मजदूर रहते हैं। यहां के ग्रामीणों ने दो एकड़ सामुदायिक जमीन को खेती के लिए सुरक्षित किया। इसपर धान को रोपाई से कटाई तक प्रत्येक परिवार से एक महिला और एक पुरुष श्रमदान करते हैं। तैयार फसल को गांव में एक घर में जमा किया जाता है। जब किसी को आर्थिक सहायता की जरूरत पड़ती है, तो इस धान को बेचकर उसे पैसे दिए जाते हैं। अनाज की कमी पर धान दिया जाता है। सक्षम होने के बाद व्यक्ति को दिया गया अनाज लौटाना होता है, जिसमें मामूली सा अतिरिक्त अनाज भी शामिल होता है।

ताकि आर्थिक संकट से जूझना नहीं पड़े

गांव के इस पहल से ग्रामीणों को कभी भी आर्थिक संकट से जूझना नहीं पड़ता। गांव के सामुदायिक फंड में डेढ़ लाख रुपए और 50 क्विंटल धान जमा है। गांव

के बच्चे बिना किसी आर्थिक परेशानी के पढ़ाई कर पा रहे हैं। कोलाबाड़िया गांव के वाशिंदों ने अपने परस्पर सहयोग और सामुहिक प्रयास से एक अद्भुत परंपरा की शुरुआत की है। गांव में किसी बच्चे को पढ़ाई में आर्थिक कमी हो रही हो या फिर किसी व्यक्ति को अपने घर में दिक्कत हो। आसानी से सहयोग मिल जाता है। बच्चों की पढ़ाई में आर्थिक कमी पूरी की जाती है ताकि बच्चे का भविष्य पैसे की कमी से खराब ना हो। किसी घर में खाने के लिए अनान कम पड़ जाए तो उसे अनान दिया जाता है।

साभार : **दैनिक भास्कर, रांची 10-03-2025**

लघु कथा

सूरज, चांद और घड़ा

बात पुरानी है, गांव के एक स्कूल की।

कक्षा में शिक्षक बच्चों को पढ़ा रहें हैं। शिक्षक बच्चों से एक सवाल पूछते हैं-'बच्चो बताओ वह कौन-सी चीज ऐसी है जिसे तुम देख तो सकते हो पर छू नहीं सकते। किसी बच्चे ने सूरज बताया, किसी ने चांद, किसी ने इन्द्रधनुष।

कक्षा में एक ऐसा बच्चा भी उपस्थित था जिसने अभी तक कोई जवाब नहीं दिया था।

शिक्षक ने डांटते हुए उस बच्चे से कहा - तुम चुप क्यों बैठे हो तुम भी अपना जवाब बताओ।

बच्चे ने कहा- सर मेरा जवाब है- कोने में रखा हुआ घड़ा पानी का घड़ा है, जिसे मैं देख तो सकता हूं मगर छू नहीं सकता।

झलकारी बाई

डॉ. रोज केरकेट्टा

झांसी की रानी लक्ष्मीबाई को 1857 ई. की स्वतंत्रता की प्रथम लड़ाई में युद्ध करते हुए वीरगति को प्राप्त करने वाली माना गया है। लेकिन इतिहासकार आर.सी. मजूमदार अपनी पुस्तक हिस्ट्री ऑफ फ्रीडम मूवमेंट में लिखते हैं - 'प्राप्त तथ्यों से ऐसा कुछ भी नहीं मिलता है जिसके आधार पर कहा जा सके कि रानी लक्ष्मीबाई विद्रोह की नेत्री थीं। इसके उलट प्राप्त तथ्य यह बताते हैं कि उन दिनों बुंदेलखंड राज्य षडयंत्र का अड्डा बना हुआ था। वहां गद्दी के लिए भाई-भाई आपस में लड़ रहे थे।'

झांसी का सूबेदार रघुनाथ हरिनेवालकर को बनाया गया था। उसने 40 वर्षों के बाद सूबेदारी अपने भाई शिवराम भाऊ को दे दी। स्वयं रघुनाथ काशी जाकर मृत्यु को प्राप्त किया। शिवराम के तीन बेटे थे कृष्ण राव, रघुनाथ राव और गंगाधर राव।

कृष्ण राव बड़ा था, जिसके बेटे का नाम रामचन्द्र राव था। नियमतः उसे ही सूबेदारी मिलनी थी। लेकिन रामचन्द्र राव की अपनी मां सरखू बाई से बन नहीं रही थी और घरेलू फसाद बना हुआ था। इसी बीच बाजी राव पेशवा ने अंग्रेजों से संधि कर ली। उसने 74 हजार रुपये सालाना उन्हें देना स्वीकार कर लिया। गद्दी पर रामचन्द्र राव को बैठना था तब उसकी हत्या हो गई। सो उसकी विधवा पत्नौ ने मोरेश्वर (सागर निवासी) के पुत्र को गोद लिया। लेकिन अंग्रेजों की नीति के अनुसार गोद लिए पुत्र को अंग्रेजों की स्वीकृति नहीं मिली। उन्होंने रघुनाथ राव को झांसी की गद्दी पर बैठाया। इधर गंगाधर राव ने अंग्रेजों को लिखा कि रघुनाथ राव कोढ़ रोग से ग्रसित है। हिन्दू धर्मशास्त्र के अनुसार यह अधर्म है, क्योंकि कोढ़ रोग से ग्रस्त आदमी को शास्त्र गद्दी पर बैठाने की अनुमति नहीं देता है। लेकिन रघनाथ राव की एक रखैल थी गजरा। उससे रघुनाथ राव को एक बेटा था जिसका नाम अलीबहादुर था।

अतः झांसी की गद्दी के लिये रघुनाथ राव, रामचन्द्र राव का दत्तक पुत्र कृष्ण राव, अलीबहादुर, गंगाधर राव आपस में लड़ रहे थे। अंग्रेज इस पर कैसे नहीं हस्तक्षेप करते? सो उन्होंने गंगाधर राव के पक्ष में फैसला दिया कि वह गद्दी का हकदार होगा। यहां इसे गौर करने की जरूरत है कि उस वक्त झांसी राज्य की आमदनी 18 लाख थी। अतः गंगाधर को एक लाख रुपया देना तय हुआ। रघुनाथ की विधवा को एक हजार रुपया और रखैल गजरा को पांच सौ रुपया देना तय हुआ। झांसी अंग्रेजों ने ले लिया।

गंगाधर राव की पत्नी मर गई, ज्योतिषियों ने सलाह दी कि वह छोटी लड़की से विवाह करे ताकि बुढ़ापे में जवानों अधिक दिनों तक रहे। इसी उद्देश्य से विदूर की नौ वर्षीय मनु उर्फ छबीली से गंगाधर राव ने विवाह किया। गंगाधर राव उस समय 62 वर्ष के थे। इधर गंगाधर राव ने मनु से विवाह किया, उधर मनु के पिता ने अन्य स्त्री से विवाह किया। गंगाधर ने मनु का नाम लक्ष्मीबाई रखा। लक्ष्मीबाई को एक पुत्र भी हुआ जो शीघ्र ही मर गया। इधर गंगाधर राव बुढ़ापे और बीमारी से ग्रस्त हो गए और 21 नवंबर 1853 को उनकी मृत्यु हो गयी।

गंगाधर राव के मरते ही प्रशासन में उथल-पुथल हो गया। झांसी की सेना हटा ली गई। सेना में पूरन कोरी देशभक्त सैनिक था। उसने झांसी की सेना के साथ मिल कर अंग्रेजों से लड़ाई की थी। इनकी पत्नी का नाम था झलकारी बाई। पूरन कोरी और झलकारी बाई झांसी राज के प्रति समर्पित थे, झलकारी भी युद्ध विद्या में निपुण थी। 10 मई 1857 को मेरठ छावनी में विद्रोह भड़का तो उसकी लपट झांसी भी पहुंची। अंग्रेजों के विरूद्ध भाऊ बक्सी और पूरन कोरी उठ खड़े हुए, इन्होंने 5 जून 1857 को खजाना और शस्त्रागार कब्जे में कर लिया। उस समय खजाने में चार लाख रुपये थे।

अंग्रेजों में डनलप नामक अधिकारी मारा गया। कैप्टन गार्डन गोला फटने से मारा गया। कैप्टन स्कीन ने आत्म

समर्पण किया। अंग्रेज समर्थक भारतीय कोतवाल नीलधर, जमादार नत्थूसिंह आदि पकड़े गए, इसके बाद पूरन कोरी और भाऊ बक्सी ने जाकर लक्ष्मीबाई से सैनिकों का वेतन मांगा। जब लक्ष्मीबाई ने धन देने से आनाकानी की तो इन दोनों ने शर्त रखी कि ऐसी अवस्था में झांसी बचाना जरूरी है। वे सदाशिव नारायण से पैसे लेकर उसे गद्दी में बैठाने की बात की। तब लक्ष्मी बाई ने अपने गहने दिए, इसे बेचकर सैनिकों का वेतन चुकाया गया। विद्रोहियों के चले जाने के बाद लक्ष्मीबाई ने स्वयं को झांसी की रानी घोषित किया, लेकिन पूरन कोरी और भाऊ बक्सी के विद्रोह के तेवर से वह आशंकित हो उठी। इतिहास के शोधार्थी बताते हैं कि इन दोनों को काबू में करने के लिए लक्ष्मीबाई ने अंग्रेजों से गुप्त संधि कर ली थी। उसने गोला बारूद तक उन्हें दे दिया था।

पूरन कोरी की पत्नी झलकारी बाई लक्ष्मीबाई की सेविका थी। पति की तरह वह भी झांसी से बहुत प्रेम करती थी। वह भी नहीं चाहती थी कि झांसी को रानी लक्ष्मीबाई अंग्रेजों को सौंप दे। झांसी को अंग्रेजों से बचाने के लिए पूरन कोरी और भाऊ बक्सी अंग्रेजों से जी-जान से लड़ रहे थे। इधर झलकारी बाई जो रूप रंग उम्र में लक्ष्मीबाई की तरह थी। वह लक्ष्मीबाई को बचाना चाहती थी। लक्ष्मीबाई को समझाते हुए उसने उसे बिठूर निकल जाने को कहा। झांसी की रानी लक्ष्मीबाई बितूर निकल गई, तब रानी के वेश में झलकारी बाई युद्ध में कूद पड़ी। अंग्रेजों ने उसे ही झांसी की रानी समझा। वे उस पर टूट पड़े। इसी बीच उसे पता चला कि पूरन कोरी शहीद हो गए हैं। तब वह अधिक उग्र होकर लड़ने लगी और युद्ध के मैदान में ही मारी गई।

अंग्रेज सेनापति जनरल ह्यरोज ने भी कहा था 'स्टूअर्ट ही नहीं अगर हिन्दुस्तान की एक प्रतिशत लड़कियां भी झलकारी बाई की तरह आजादी की दीवानी हो गई तो हम सबको यह देश छोड़कर हाथ झाड़कर भागना पड़ेगा (4 जून 1858)।'

झलकारी बाई का न राज्य था, न महल था। न वे रानी होने की कामना करती थीं। उन्होंने सिर्फ देश की आजादी के लिए संघर्ष कर वीरगति को प्राप्त किया।

जब महिलाओं की वीरता का इतिहास लिखा जाएगा तब झलकारी बाई का नाम भी स्वर्णाक्षरों में लिखा जाएगा।■

चक्र और चक्कर

फागुन से गुजरती हवा के कारण
फगुनाई मंजरायी आम की डाली
लहरा रही थी धीरे-धीरे।
अमरइया पर बैठी गौरैया
गा उठी अचानक चिर्र-चिप-चिप
फुदक रही थी, चंचल चित्त'
क्या आ गया वसंत सचमुच?

दक्षिण के पोजो पेड़ पर
मुहकल बोला हुद-हुद, हुद-हुद
दूर बैठा जोड़ा उसका
पल पल बोल रहा था चीखकर

हुद-हुद, हुद-हुद
चिढ़ा था, यां कि चिढ़ा रहा था
क्या आ गया वक्त घोंसला बनाने का?
वसंत हो या ग्रीष्म, वर्षा हो या शरद,
या ठिठुरती शिशिर हों,
मौसम तो ऐसे ही आता है, जाता है रूटीन सेजैसे
मैं बेखबर मौसम से
रोज उठती हूं मुर्गे की बांग पर रूटीन से
सबसे पहले चूल्हा जलाकर,
चाय बनाकर, हर बिस्तर पर पहुंचाती हूं

मैं अमरइया, न चिरैया
न हुदहुद, न मौसम बौराया
पर नहीं, मैं चक्कर हूं, चक्कर काटती हूं
घर के अंदर इस कमरे से उस कमरे तक,
मुर्गे की बांग से जागना, टिटहिरी के टूक से सोना
मेरा रूटीन है बस इस तक, उस तक सेवा
पहुंचाना।

किसान मेला

झारखंड एक कृषि प्रधान देश है। यहां की अधिसंख्य आबादी कृषि पर निर्भर है। जलवायु परिवर्तन के कारण उपजी संकट से किसान भी परेशान है। बाजार पर आश्रित होने के कारण कृषि महंगी भी होती जा रही है। इन परिस्थितियों का सामना किसान कैसे करें? जलवायु अनुकूलन खेती क्या है तथा जैविक खेती को बढ़ावा देने के उद्देश्य से प्रतिवर्ष की भांति इस वर्ष भी किसान मेला का आयोजन 'संवाद' द्वारा किया गया।

दिनांक 11-12 फरवरी 2025 को मेड़िया मुसाबनी में किसान मेला का आयोजन 'बिदु चादांन पुस्तकालय' एवं 'ग्रामीण महिला विकास मंच' के सहयोग से 'संवाद' द्वारा किया गया। किसान मेला का उद्घाटन मेड़िया गांव के गांव मांझी बाबा प्रसेन्नजीत हांसदा, सोमाय सोरेन, पूनम सोरेन एवं जमुना हेम्ब्रम द्वारा सामूहिक रूप से किया गया।

जलवायु अनुकूलन एवं जैविक खेती विषयक विचार गोष्ठी में वक्ताओं ने अपने विचार रखते हुए कहा कि जलवायु परिवर्तन को देखते हुए हमें जलवायु अनुकूलित खेती करना होगा। जैविक खेती करना है तो पशुपालन को भी ध्यान में रखना होगा। खेती का मतलब केवल अनाज उगाना नहीं है पशुपालन भी उसका एक पूरक कार्य है। आजकल के बच्चे पढ़-लिख कर खेती से विमुख हो रहे हैं यह बात चिंताजनक है।

इस अवसर पर लगभग 100 किसानों ने अपने फसलों की प्रदर्शनी लगायी। फसलों के साथ-साथ कृषि से जुड़े उपकरणों की भी प्रदर्शनी लगाई गई। बच्चों द्वारा आयोजित विज्ञान प्रदर्शनी लोगों के बीच आकर्षण का केन्द्र बनी रही।

मेढ़क दौड़, गणित रेस, सामान्य ज्ञान, खाया पीया, अंदर बाहर फुर्र, पत्तल दोना बनाना, तीरंदाजी, बाल्टी से बॉल फेंकना आदि खेल का भी आयोजन किया गया। रात में लवकेशरा और डुमूरिया प्रखंड के सेरालडी गांव के

अखड़ा टीमों ने पारंपरिक बाजे गाजे के साथ रंगारंग प्रस्तुति दी। मेले के समापन के अवसर पर प्रदर्शनी, खेलकूद में विजेताओं को पुरस्कार भी प्रदान किया गया।

दूसरा किसान मेला दिनांक 14-15 फरवरी 2025 को मधुपुर प्रखंड के जाभागुड़ी पंचायत अंतर्गत लालपुर गांव में आयोजित किया गया। मेले का उद्घाटन झारखड राज्य के मंत्री हफीजुल हसन, गोवा से आये अतिथि कलानंद मणि, एक्शन एड के सौरभ कुमार, ग्रामसभा फेडरेशन की राज्य संयोजिका एनी टुडू, 'संवाद' के घनश्याम द्वारा

सामूहिक रूप से किया गया। गांव के बारे बताते हुए घनश्याम ने कहा कि यह एक ऐसा गांव था जहां की जमीन

पथरीली थी। लोग केवल धान उगाते थे। मुश्किल से एक शाम का भोजन यहां के लोग जुटा पाते थे लेकिन यह गांव अब स्वशासन और स्वावलंबन की दिशा में आगे बढ़ रहा है। इसके लिए गांव के किसान, महिला किसान एवं युवक युवतियों ने संगठित होकर काम किया। सामूहिक श्रमदान एवं न्यूनतम संसाधनों के बल पर इन लोगों ने गांव की तस्वीर बदल दी। मुख्य अतिथि हफीजुल हसन ने कहा कि आज न कल सभी को खेती करना ही होगा। गुरूजी ने जो नारा - एक घंटा बाड़ी और एक घंटा पढ़ाई का दिया उसे सार्थक करना होगा। हमें रासायनिक खाद, हाइब्रीड बीजों से बचना होगा। जैविक खेती की ओर लौटना होगा। उन्होंने झारखंड में समुचित सिंचाई व्यवस्था करने का आश्वासन भी दिया।

अन्य वक्ताओं ने भी जैविक खेती की वकालत करते हुए कहा कि अगर हमें स्वस्थ और खुशहाल रहना है तो

जैविक खेती करनी होगी। मेले के अवसर पर खेती किसानी उपज हस्तकला, बांसकला, चित्रकला एवं पुस्तकल प्रदर्शनी लगाई गयी थी। प्रदर्शनी में शामिल विजेताओं को सम्मानित करने के बाद मेले का समापन किया गया।

महिला दिवस सह महिला सम्मेलन

12वीं पंचवर्षीय योजना में महिलाओं को किसान माना गया परंतु व्यावहारिकता में आज भी किसान के रूप में पुरुषों को ही माना जाता है। पाठ्य पुस्तकों में भी किसान के रूप में जो चित्रण किया जाता है वह भी पुरुषों का ही है। जबकि हकीकत यह भी है कि खेती किसानी का 80% कार्य महिलायें करती है बाजवूद इसके हमारा समाज आज भी महिलाओं को किसान का दर्जा नहीं देता है। महिलाओं को किसान का दर्जा मिले जमीन पर उसका

भी मालिकाना हक हो इन्हीं मुद्दों को आधार बनाकर महिला दिवस के उपलक्ष्य में महिला दिवस सह महिला किसान मेले का आयोजन किया गया है।

11 मार्च 2025 को ग्रीन स्कूल, तिलकसुती इटकी तथा मंगलम सभागार, 52 बीघा मधुपुर में महिला सम्मेलन सह महिला किसान मेला का आयोजन किया गया।

इटकी में आयोजित सम्मेलन सह महिला किसान मेले का उद्घाटन कुन्दी पंचायत की मुखिया फ्रांस्सिका कुजूर, 'संवाद' की ट्रस्टी कोर्दूला कुजूर, 'जावा' रांची की रोजालिया तिर्की, सिसई से आयी महिला किसान शांति देवी बेड़ो की महिला किसान सुमित्रा कुजूर ने सामूहिक रूप से दीप जलाकर किया।

इस सम्मेलन का विषय था - लैंगिक समानता, किसान के रूप में महिला की पहचान तथा भूमि पर महिलाओं का अधिकार। महिला दिवस के बारे बताते हुए वक्ताओं ने कहा कि हर वर्ष महिला दिवस का एक थीम

होता है इस वर्ष यानी 2025 का थीम है सभी 'महिलाओं और लड़कियों के लिए : अधिकार, समानता, सशक्तिकरण अर्थात सभी के लिए समान अधिकार, शक्ति और अवसर प्रदान हो' यह वर्ष इसलिए भी महत्वपूर्ण है क्योंकि यह बीजिंग घोषणा और कारवाई के लिए मंच की 30वीं वर्षगांठ भी है। महिला दिवस हम महिलाओं के संघर्ष का प्रतिफल है। इसी दिन वर्ष 1908 में क्लारा जेटकिन के नेतृत्व में कपड़ा मिल के मजदूर महिलाओं ने काम के घंटे कम करने एवं उचित मजदूरी के लिए आवाज उठाई थी। इसके बाद साल 1911 में पहली बार डेनमार्क, आस्ट्रिया,

जर्मनी और स्विटजरलैंड में महिला दिवस मनाया गया। इसके बाद साल 1975 में यूएन ने आधिकारिक रूप से अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस मनाने की घोषणा की और तब से आज तक 8 मार्च को महिला दिवस मनाने की परंपरा चली आ रही है।

लैंगिक समानता के बारे चर्चा में यह बात उभरकर सामने आयी कि अगर हमें समाज में समानता लानी है तो इसकी शुरूआत घर से करनी पड़ेगी। महिलाओं को किसान के रूप में पहचान एवं भूमि पर महिलाओं को भी अधिकार होना चाहिए क्योंकि जबतक सत्ता और संपत्ति पर महिलाओं का अधिकार नहीं हो जाता तब तक समता, न्याय पर आधारित समाज की परिकल्पना करना बेमानी है।

कृषि उपज पर आधारित प्रदर्शनी में शामिल किसानों को सम्मानित किया गया तथा विजेताओं को पुरस्कृत भी किया गया। मिलकर हम नाचेंगे गायेंगे मिलकर खुशियां मनायेंगे गीत के साथ सम्मेलन का समापन किया गया।

मंगलम सभागार 52 बीघा मधुपुर में ''हम हैं महिला किसान, जमीन हमारी है पहचान'' विषयक गोष्ठी का आयोजन किया गया। मुख्य अतिथि डॉ. सुमन लता ने कहा

कि महिलाओं में अपार शक्ति है। उन्हें अपनी शक्ति को पहचानकर उसका सदुपयोग करना होगा। महिलायें खेती किसानी का सारा कार्य करती है लेकिन महिला किसान के रूप में उसकी पहचान नहीं है। जमीन का पट्टा महिला किसान के नाम पर हो। घनश्याम ने अपने वक्तव्य में कहा कि 1793 के पूर्व जमीन समाज और समुदाय की थी। 1793 से जमीन की स्थायी बंदोवस्ती और व्यक्तिगत पट्टा दिया जाने लगा। समाज पितृ प्रधान होने के कारण पुरुषों के नाम

जमीन का पट्टा दिया गया। महिलाओं को समाज में बराबरी का दर्जा मिलना चाहिए।

इसलिए 'संवाद' के 16 जिले के 750 गांवों में महिला किसान की पहचान और जमीन के पट्टे पर महिला का नाम हो यह अभियान चला रही है। अन्य वक्ताओं ने भी समानता के अधिकार के लिए महिलाओं के नाम जमीन हो इसकी वकालत की तथा संगठित होकर संघर्ष करने का आह्वान किया।

'पेसा नियमावली' पर राज्यस्तरीय विमर्श

पेसा कानून को बने हुए लगभग तीन दशक हो चुके हैं। बहुत संघर्ष के पश्चात इस पर नियमावली बन तो गई है पर वह अब तक लागू नहीं हो पायी है। पेसा नियमावली पर चिन्तन मनन करने और आगे के रास्ते की तलाश हेतु एक राज्यस्तरीय विमर्श का आयोजन दिनांक 17 फरवरी 2025 को एच.आर.डी.सी., रांची में 'संवाद' एवं ग्राम सभा फेडरेशन झारखंड के संयुक्त तत्वाधान में आयोजित की गई।

विमर्श में यह बात उभरकर सामने आई कि कई बैठकों एवं विमर्श के पश्चात झारखंड सरकार द्वारा पेसा नियमावली बनाई गयी है पर अभी तक लागू नहीं हो पायी है। हमें आशा थी कि विधानसभा चुनाव के पूर्व झारखंड सरकार इसे लागू कर क्रियान्वित करेगी परंतु कतिपय कारणवश ऐसा नहीं हो सका। परंतु अब झारखंड हाईकोर्ट ने दबाव बनाया है कि सरकार इसे अविलंब लागू करें। उसके बाद से ही विभिन्न नेटवर्क एवं जनसंगठनों द्वारा पेसा के प्रावधान पर चर्चा एवं विमर्श की शुरूआत हो चुकी है। अभी समय है कि हम सभी मिलकर सरकार से मांग करें कि पेसा नियमावली के प्रावधानों को शीघ्र ही

झारखंड में लागू करें। क्योंकि दस अनुसूचित राज्यों में से केवल दो राज्यों ने ही अभी तक पेसा नियमावली को लागू नहीं किया है जिसमें झारखंड भी एक है।

सभी वक्ताओं ने एक मत से यह भी स्वीकार किया कि नियमावली ऐसी हो जो 1996 के पेसा कानून के भावना के अनुरूप हो। नियमावली लागू होने से झारखंड में अवैध रुप से होनेवाली भूमि हस्तांतरण रोक लगेगी तथा हमारी पारंपरिक स्वशासन व्यवस्था को भी एक सकारात्मक दिशा मिलेगी। इसलिए यह योजना बनी कि और दो दिनों की एक बैठक रखी जाय और हम किस प्रकार की नियमावली चाहते हैं और क्यों चाहते हैं इस पर गंभीर चिन्तन मनन हो। फिर मुख्यमंत्री से एक प्रतिनिधि मंडल मिलकर इसे अविलंब क्रियान्वय की मांग की जाय।

इस कार्यशाला में झारखंड के विभिन्न जिलों से प्रतिभागी शामिल हुए।

- आधी दुनिया डेस्क

वृद्धाएँ धरती का नमक हैं

'कपड़ा है देह', ...'जीर्णाणि वस्त्राणि' ...वाला
यह श्लोक 'गीता' का, सुना था कभी बहुत बचपन में
पापा के पेट पर
पट्ट लेटे-लेटे!
संदर्भ यह है कि
दादाजी गुज़र गए थे,
रो रहे थे पापा धीरे-धीरे
और हल्की हिचकियों से
हिल जाता था जो कभी पेट उनका,
मुझको हिचकोले का आनंद आता था,
हालाँकि डरी हुई थी मैं यों सबके एकाएक रो पड़ने से,
बहुत चकित थी कि जो कभी नहीं रोते थे,
केवल रुलाते थे,
वे सब भी आज रो रहे हैं बुक्का फाड़े,
डरी हुई–सहमी हुई थी–
तभी तो यों चिपकी थी पापा से
पसीने से तर उनके बनियान की तरह
जो शायद फटी भी हुई थी।
समझा रहा था कोई उनको–
'क्यों रो रहे हो कि
यह देह कपड़ा है,
फटा हुआ कपड़ा बदल देती है आत्मा तो
इसमें रोना क्या, धोना क्या!'
मैं क्या समझी, क्या नहीं समझी–
अब कुछ भी याद नहीं,
अब बस इतना जानती हूँ 'जीर्णाणि वस्त्राणि' के नाम पर–
कपड़े जब तार-तार होने लगते हैं,
बढ़ जाती है उनकी उपयोगिता!
फटे हुए बनियान बन जाते हैं झाड़न
और पुराने तौलिए पोंछे का कपड़ा।
फटी हुई साड़ियाँ दुपट्टे बन जाती हैं,
बन जाती हैं बच्चों की फलिया।
धोती के कोरों का अच्छा बनता है इजारबंद,

कहीं न कहीं सबसे मिल जाता है उनका तार-छंद
जो फटकर तार-तार हो जाते हैं–
सार्वजनिक बन जाती है जिनकी निजता!
वृद्धाएँ धरती का नमक हैं,
किसी ने कहा था!
जो घर में हो कोई वृद्धा–
खाना ज्यादा अच्छा पकता है,
परदे-पेटीकोट और पायजामे भी दर्ज़ी और रफ़ूगरों के
मुहताज नहीं रहते,
सजा-धजा रहता है घर का हर कमरा,
बच्चे ज्यादा अच्छा पलते हैं,
उनकी नन्ही-मुन्नी उल्टियाँ सँभालती
जगती हैं वे रात-भर,
उनके ही संग-साथ से भाषा में बच्चों की
आ जाती है एक अजब कौंध
मुहावरों, मिथकों, लोकोक्तियों,
लोकगीतों, लोकगाथाओं और कथा-समयकों की।
उनके ही दम से
अतल कूप खुद जाते हैं बच्चों के मन में
आदिम स्मृतियों के।
घुल जाती हैं बच्चों के सपनों में
हिमालय-विमालय की अतल कंदराओं की
दिव्यवर्णी-दिव्यगंधी जड़ी-बूटियाँ और फूल-चूल!
रहती हैं वृद्धाएँ, घर में रहती हैं
लेकिन ऐसे जैसे अपने होने की खातिर हों क्षमाप्रार्थी
–लोगों के आते ही बैठक से उठ जातीं।

- अनामिका

आधी दुनिया के कुछ महत्वपूर्ण अंक

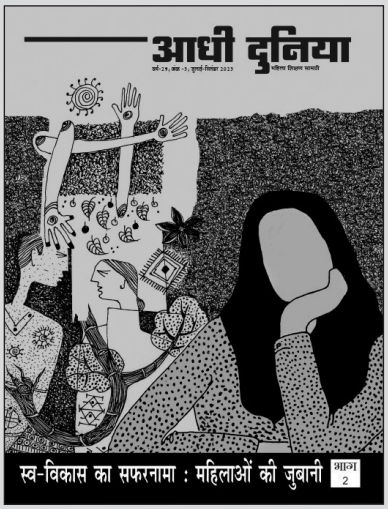

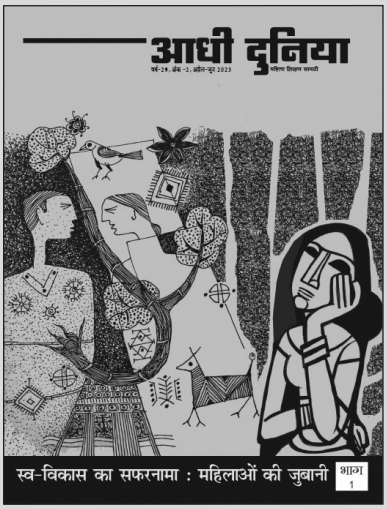

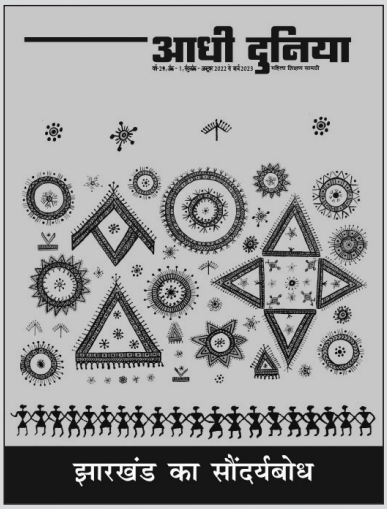

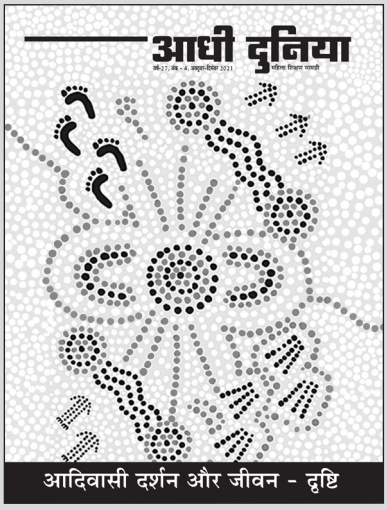

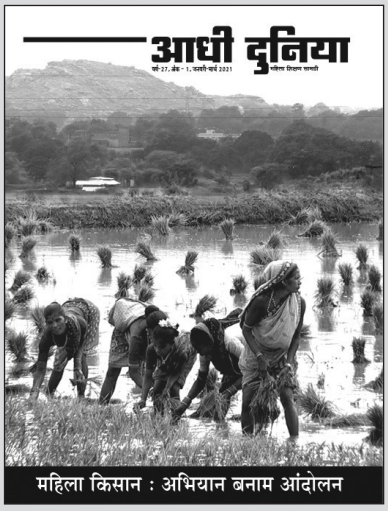

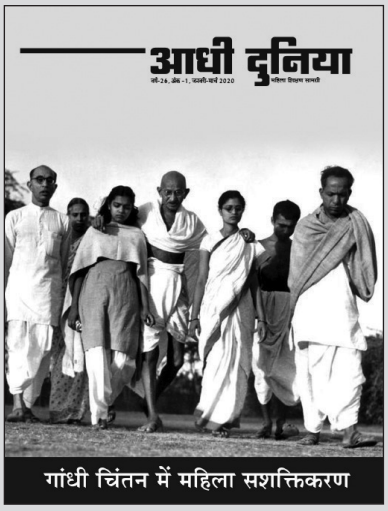

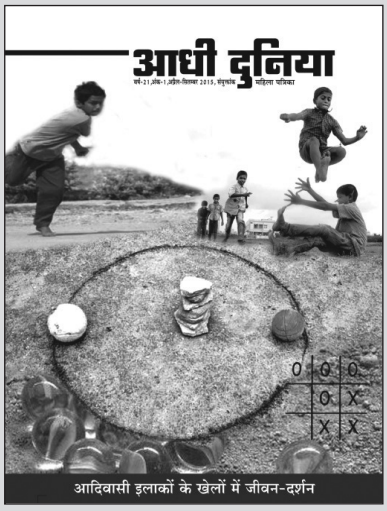

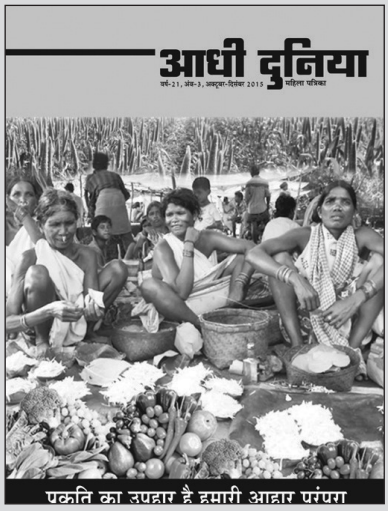

संपर्क : www.samvad.net
sarjomsamvad@gmail.com